उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम – तीसरे संशोधन पर एक टिप्पणी और आगे संशोधनों की सम्भावनाऐं

पी.वी.वी. सत्यनारायणमूर्ति
सदस्य, जिला उपभोक्ता फोरम
विजयवाड़ा, आन्ध्र प्रदेश

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान
नई दिल्ली

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम : तीसरे संशोधन पर एक टिप्पणी – संशोधनों की सम्भावनाऐं

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम या उस विषय में समाज कल्याण का कोई अन्य कानून जब संसद के दोनों सदनों से बाहर आता है तो उसमें अपर्याप्तता या संदिग्धता संबंधी दोष हो सकते हैं। कार्यान्वयन के दौरान अधिनियम के उपबंधों को लागू करने में कुछ कठिनाइयां हो सकती हैं या अपर्याप्तता अथवा संदिग्धता का पता चल सकता है। इसके बाद ही अतिरिक्त उपबंधों या मौजूदा उपबंधों के आशोधन/विलोपन की आवश्यकता सामने आएगी। इसी बीच मामलों का न्यायनिर्णयन करते समय न्यायिक प्राधिकारी कानून के सुस्थापित सिद्धान्तों के आधार पर निर्णय करने के लिए ऐसे मुद्दों पर कार्रवाई करेंगे। उदाहरण के लिए, जब उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम का अधिनियमन किया गया था, तब परिसीमन की अवधि के बारे में कोई उपबंध नहीं था। जब शिकायत निवारण एजेंसियों के सामने विलम्बित मामले आने शुरू हुए, तब परिसीमा निर्धारित करने के लिए किसी उपबंध की जरूरत महसूस की गई। सन् 1993 में धारा 24–क जोड़े जाने तक ऐसे मुद्दों पर परिसीमन अधिनियम के अनुसार निर्णय दिया जाता था।

हमेशा बदलती रहने वाली परिस्थितियों और सामाजिक व्यवस्था में कानूनों की निरंतर समीक्षा करने और निरर्थकता से या

अप्रचलन से उन्हें बचाने के लिए, संशोधन का प्रस्ताव करने की जरूरत है। इस अधिनियम में पहला संशोधन संसद द्वारा 1991 के अधिनियम 34 द्वारा किया गया था, जिसे 15.6.1991 से लागू किया गया। दिनांक 17.10.1990 को हुई केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद् की आठवीं बैठक में एक अधिकार–प्राप्त कार्य दल गठित करने की सिफारिश की गई। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम और एम.आर.टी.पी. अधिनियम को अधिक प्रभावी बनाने के लिए दिए गए सुझावों पर विचार करने हेतु दिनांक 7 जनवरी 1991 को सरकार ने एक उच्च अधिकार–प्राप्त कार्य दल गठित किया। इस कार्य दल ने अनेक संशोधनों की सिफारिश की और तदनुसार दिनांक 18.6.1993 से 1993 के अधिनियम 50 के द्वारा दूसरा संशोधन किया गया। परन्तु कार्यदल द्वारा दिए गए निम्नलिखित 5 सुझावों को शामिल नहीं किया गयाः

1. शिकायत शब्द का दायरा बढ़ाया जाना चाहिए ताकि उसमें वारंटियां, संविदा की शर्तें, सेवा के करार आदि शामिल किए जा सकें।

2. शिकायतकर्ता को पार्टी बनाए बिना, उपभोक्ता संगठनों को शिकायत दर्ज कराने की इजाजत दी जानी चाहिए। इससे उपभोक्ता संगठन विशिष्ट कार्रवाई शिकायतें दायर कर सकेंगे।

3. इसी प्रकार सरकारी अस्पतालों में स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाओं को अधिनियम के दायरे में लाए जाने की जरूरत है।

4. विपक्षी पार्टियों को किसी वकील की सेवाएं लेने की इजाजत दी जानी चाहिए, यदि शिकायतकर्ता किसी वकील की सेवाएं लेता है या विपक्षी पार्टी को वकील रखने की सहमति देता है या यदि कानूनी पेचीदगियों के कारण फोरम यह चाहता है।

5. संविधान के अनुच्छेद 323ख में उपयुक्त संशोधन किया जाना चाहिए, जिससे अधिनियम के अंतर्गत विधिवत् गठित की गई शिकायत निवारण एजेंसियों के निर्णय पर उच्च न्यायालयों के रिट संबंधी क्षेत्राधिकार को हटाया जा सके।

अधिनियम की प्रचालनोत्तर अवधि में, अधिनियम के अन्तर्गत गठित की गई शिकायत निवारण एजेंसियों के सामने और उच्चतम न्यायालय के सामने भी चर्चा के लिए स्पष्ट न किए गए अनुमान और मुद्दे आए हैं। मामलों का निपटान करते समय इन न्यायिक प्राधिकारियों ने कानून के सुस्थापित सिद्धान्तों के अनुसार स्पष्टीकरण दिए।

पहले किए गए दो संशोधनों के बावजूद इसमें कुछ कमियां मौजूद थीं। इसके अलावा, उपभोक्ताओं को बेहतर संरक्षण

देने के लिए केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद, उपभोक्ता मामले मंत्रालय और राष्ट्रीय आयोग में अपेक्षित संशोधनों पर विचार किया गया। इस प्रकार संसद को तीसरी बार संशोधनों का प्रस्ताव दिया गया और 2002 के अधिनियम 62 के द्वारा यह संशोधन दिनांक 15.3.2003 से लागू किए गए। इन संशोधनों का बहुत अधिक महत्त्व है क्योंकि उनसे अधिनियम के कुछ उपबंध लगभग पूरी तरह दोबारा तैयार किए गए। वर्ष 2002 में किए गए अनेक संशोधन, प्रमुख अधिनियम में दी गई धाराओं के मुकाबले अधिक हैं। इन संशोधनों को मोटे तौर पर दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। संशोधनों की पहली श्रेणी का आशय यह है कि अधिनियम के प्रक्रिया संबंधी पहलुओं को सरल और कारगर बनाया जाए जबकि संशोधनों की दूसरी श्रेणी का आशय यह है कि अधिनियम के दायरे को विस्तृत किया जाए।

धारा 2(1) में, अधिनियम में इस्तेमाल किए गए कुछ शब्दों की परिभाषाएं दी गई हैं। निर्णयावधि के अधिकांश मामले इसी धारा के इर्द–गिर्द होते हैं। पहले किए गए लगभग 10 संशोधनों के बावजूद इतने ही संशोधन इस धारा विशेष में किए गए हैं। शिकायतकर्ता शब्द की परिभाषा के अंतर्गत मृतक उपभोक्ता के कानूनी वारिसों और प्रतिनिधियों को लाने की दृष्टि से अधिनियम में धारा 2(1)(ख)(फ) जोड़ी गई। इस खण्ड को जोड़ने से पहले यह मामला विभिन्न मंचों के सामने आता था और पार्टियां अपने–अपने लाभ के अनुसार मामले पर दलील देती थी जिसके

परिणामस्वरूप कार्रवाइयों में विलम्ब होता था। अब सवाल यह था कि क्या मृतक के कानूनी प्रतिनिधि अधिनियम के अंतर्गत उपचार प्राप्त कर सकते हैं?

मैसर्स कास्मोपोलिटन अस्पताल और अन्य बनाम वी. वसंथा पी. नायर के मामले में[1] राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि मृतक की विधवा भी उपचार प्राप्त नहीं कर सकती क्योंकि वाद कारण लागू करने के लिए उसके प्रतिनिधि के रूप में उपचार प्राप्त नहीं कर सकते। इसी प्रकार, डॉ. सीनियर लोई और अन्य बनाम कोनोलिल पथूमा और अन्य के मामले में[2] राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि ऐसे कानूनी वारिस, जो मृतक की सम्पत्ति के हकदार हैं, अधिनियम के अंतर्गत शिकायत दायर कर सकते हैं।

कानून का सुस्थापित सिद्धान्त यह है कि वह अधिकार उसके प्रतिनिधि में निहित होते हैं जो कोई मृतक व्यक्ति अपने पीछे छोड़ जाता है। राष्ट्रीय आयोग ने कोस्मोपोलिटन अस्पताल के मामले में निम्नलिखित टिप्पणी दीः "यह बात सही है कि उपभोक्ता शब्द की परिभाषा में ऐसे अभिव्यक्त शब्द नहीं हैं जो इस बात का संकेत हो कि उसका प्रतिनिधि भी अधिनियम के दायरे में शामिल होता है ..... परन्तु कानून के प्रचालन से कानूनी प्रतिनिधि को मृतक व्यक्ति के वाद कारण को लागू करने के उद्देश्य के लिए मृतक का अधिकार, स्थान और व्यक्तित्व मिल

[1] (1992) सी.पी.जे. 302 (एन.सी.)
[2] (1993) सी.पी.जे. 30 (एन.सी.)

जाता है।" राष्ट्रीय आयोग ने यह राय भी व्यक्त की कि उपभोक्ता शब्द के अर्थ में विस्तार किया जाए जिससे मृतक उपभोक्ताओं के कानूनी प्रतिनिधियों को भी उसमें शामिल किया जा सके। अन्यथा मृतक का परिवार किसी उपचार से वंचित रह जाएगा। इन चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए और अधिनियम के अंतर्निहित कानूनी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए उपरोक्त खंड जोड़ा गया।

- धारा 2(1)(ग)(i) में संशोधन करके सेवा प्रदायक को भी अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत लाया गया, यदि वह अनुचित व्यापार व्यवहार या प्रतिबंधित व्यापार व्यवहार अपनाता है। इसमें अधिनियम के अंतर्गत केवल व्यापारियों का ही उल्लेख किया गया। इस संशोधन में यह सुनिश्चित किया गया कि अनुचित व्यापार व्यवहार या प्रतिबंधित व्यापार व्यवहार का सहारा लेने वाले सेवा प्रदायक कानून के अंतर्गत अपने दायित्व से न बच सकें।

- धारा 2(1)(ग)(iv) के वाक्य–विन्यास में इस प्रकार परिवर्तन किया गया कि इस धारा के दायरे को विस्तृत किया जा सके। मूल्य सूची में दर्शाये गए मूल्य और पार्टियों के बीच सहमति व्यक्त किए गए मूल्य बाध्यकारी होते हैं और व्यापारी या सेवा प्रदायक को ऊपर उल्लिखित मूल्य से अधिक धनराशि वसूल नहीं करनी चाहिए।

पहले शिकायत निवारण एजेंसियों ने व्यवस्था दी थी कि शिकायत निवारण एजेंसियों के सामने मूल्य को विषय–वस्तु नहीं बनाया जा सकता। अनियंत्रित मूल्य की हेरा–फेरी को ध्यान में रखते हुए संसद ने अपने विवेक से यह संशोधन किया ताकि इस धारा के अंतर्गत और अधिक मुद्दों को कवर किया जा सके।

- इन संशोधनों में धारा 2(1)(घ)(II) में किए गए संशोधन महत्त्वपूर्ण हैं जिसमें वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए ली गई सेवाओं के उपभोक्ता को इस अधिनियम के दायरे से बाहर निकाल दिया गया है। ऐसी सेवाओं के लाभग्राही या सेवाओं को किराये पर लेने वाले व्यक्ति उपभोक्ता हैं परन्तु इसमें कोई ऐसा व्यक्ति शामिल नहीं है जो किसी वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए सेवाओं का लाभ उठाता है। तदनुसार उसके अंतर्गत दिए गए स्पष्टीकरण को भी संशोधित किया गया।

यह संशोधन करने का कारण स्पष्ट है क्योंकि जब कोई ऐसा व्यक्ति पुनः बिक्री के लिए या किसी वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए सामान खरीदता है तो उसे परिभाषा में शामिल नहीं किया जाता। ऐसे किसी व्यक्ति को उपभोक्ता कैसे माना जा सकता है जो किसी वाणिज्यिक उद्देश्य के लिए सेवा किराए पर लेता है? शिकायत निवारण एजेंसियों की स्थापना उपभोक्ता के हित की रक्षा करने के लिए की गई है परन्तु व्यवसायियों के हितों की रक्षा के लिए नहीं। अब तक वाणिज्यिक संगठनों द्वारा काफी मामले

दायर किए गए हैं, जिनमें टेलीफोन विभाग, बिजली विभाग, बैंकों, बीमा कम्पनियों आदि के खिलाफ सेवा की कमी की शिकायत की गई है। इस संशोधन से शिकायत निवारण एजेंसियों के काम का भार कम हो सकता है क्योंकि सेवा प्रदायक द्वारा सेवा की कमी का आरोप लगाने वाले वाणिज्यिक संगठनों द्वारा दायर किए गए विवादों पर इसके बाद विचार नहीं किया जाएगा।

- धारा 2 के खंड (1) उपखंड (ञ) के अंतर्गत विनिर्माता शब्द में, भी इसके दायरे को विस्तृत करने के लिए, संशोधन किया गया है।

इस संशोधन से पहले दूसरे व्यक्तियों द्वारा बनाए गए पुर्जों को जोड़ने वाले व्यक्ति या किसी सामान पर अपनी मोहर लगाने या लगवाने वाले व्यक्ति भी विनिर्माता की परिभाषा में शामिल थे, जब तक वे इस बात का दावा करते थे कि उन सामानों का विनिर्माण उनके द्वारा किया गया है। अब यह दावा करने की आवश्यकता नहीं है कि विनिर्माता की परिभाषा के अंतर्गत आने के लिए वह उस सामान का विनिर्माता हो। इसी प्रकार, परिभाषा से विनिर्माताओं की शाखाओं को बाहर रखने वाले इस धारा के अंतर्गत दिए गए स्पष्टीकरण का विलोप कर दिया गया है। इस प्रकार, विनिर्माता शब्द का अब एक विस्तृत दायरा है। चूंकि परिभाषा में शाखाओं को शामिल कर दिया गया है, इसलिए यह उन मंचों को दायरा प्रदान करती है जिनके

क्षेत्राधिकार में शाखा कार्यालय स्थित है ताकि वह ऐसे विनिर्माता के खिलाफ किसी शिकायत पर न्याय–निर्णयन कर सके।

- तीसरे संशोधन द्वारा जोड़ी गई धारा 2(1)(ढढ) में 'विनियम' शब्द की परिभाषा दी गई है। इसका अर्थ है कि विनियम राष्ट्रीय आयोग द्वारा बनाए गए हैं। अधिनियम में धारा 30–क को जोड़ दिए जाने के कारण इसे शामिल करना आवश्यक हो गया था। धारा 2(1)(ढढ) के बदले उपखंड (ढढढ) रखा गया है ताकि अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत अनेक प्रकार की शिकायतों को लाने के लिए इसे विस्तृत अर्थ दिया जा सके। उक्त संशोधन निम्नलिखित है:

  "प्रतिबंधित व्यवहार का अर्थ है कोई भी ऐसा व्यापार व्यवहार जिसका आशय कीमतों की हेरा–फेरी या सुपुर्दगी की शर्तों या सामान अथवा सेवाओं से संबंधित बाजार में आपूर्ति करने के बारे में इस तरीके से तबदीली करना हो जिससे उपभोक्ताओं पर अनुचित लागत या प्रतिबंधों का भार पड़े और इसमें निम्नलिखित शामिल होंगे:

  (क) सामान की आपूर्ति करने या सेवाएं प्रदान करने में किसी व्यापारी द्वारा सहमत अवधि से अधिक इतना विलम्ब करना जिसके कारण कीमतें बढ़ जाएं या बढ़ जाने की संभावना हो;

(ख) ऐसा व्यापार व्यवहार जिससे किसी उपभोक्ता को, किसी सामान को खरीदने, अन्य सामान या सेवा किराए पर लेने की पूर्व शर्त के रूप में खरीदना, किराए पर लेना आवश्यक हो जाए।"

ऊपर दी गई परिभाषा के अनुसार, उपभोक्ता शिकायत कर सकता है, यदि विक्रेता या सेवा प्रदायक उसकी मर्जी का सामान खरीदने, सेवा किराए पर लेने के लिए पूर्व शर्त के रूप में सामान खरीदने या सेवा का लाभ उठाने के लिए कोई शर्त रखता है। पिछली परिभाषा सीमित थी और बाजार की वास्तविक युक्तियों को कवर नहीं कर सकती थी, परन्तु अब मौजूदा संशोधन अनेक शरारतों को कवर करता है जैसे कीमत में हेर–फेर करने की मंशा से आपूर्ति में उद्देश्यपूर्ण विलम्ब करना, उत्पादों या सेवाओं की बनावटी कमी उत्पन्न करना, उपभोक्ताओं पर अनुचित लागत डालने के लिए बाजार में आपूर्तियों का प्रवाह करना आदि।

- धारा 2(1)(ण) में भी एक महत्त्वपूर्ण संशोधन किया गया जिसका विस्तार से अध्ययन करना होगा क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न मामलों में इस धारा पर विस्तृत रूप से चर्चा की है। वास्तव में पूरे देश में विभिन्न मंचों में लाखों मामले दायर किए गए हैं, विशेष रूप से इस धारा के अन्तर्गत। हालांकि सेवा शब्द की व्याख्या विस्तार से की गई है, फिर भी अनेक विवादों में इस धारा के दायरे पर बार–बार

चर्चा की गई है। परिभाषा के अनुसार किसी भी प्रकार की ऐसी सेवा, जो संभावित उपभोक्ताओं को उपलब्ध कराई जाती है, इस अधिनियम के दायरे में आती है। परन्तु दो प्रकार की सेवाएं इस परिभाषा से मुक्त हैं, वह हैं – निःशुल्क प्रदान की गई सेवाएं और व्यक्तिगत सेवा के संविदा के अंतर्गत प्रदान की गई सेवाएं। सामान्य परिभाषा और परिभाषा के अपवर्जन भाग के बीच कुछ सेवाएं शामिल की गई हैं, जैसे बैंकिंग, बिजली की आपूर्ति, बीमा, परिवहन आदि। इन सेवाओं के शामिल किए जाने से, कानून की मंशा समझने के लिए अनेक दिलचस्प चर्चाएं उत्पन्न हो गई हैं।

लखनऊ विकास प्राधिकरण बनाम एम.के. गुप्ता के मामले में[3] उच्चतम न्यायालय ने परिभाषा की तीन भागों में निम्नलिखित तरीके से व्याख्या की है:

मुख्य भागः सेवा का अर्थ है : किसी प्रकार की ऐसी सेवा जो संभावित उपभोक्ता को उपलब्ध कराई जाती है।

समावेश भागः इसमें बैंकिंग, वित्तपोषण, बीमा, परिवहन, प्रोसैसिंग, बिजली और अन्य प्रकार की ऊर्जा की आपूर्ति,

[3] (1993) सी.पी.जे. 7 (एस.सी.)

बोर्डिंग या लोजिंग या दोनों, गृह निर्माण, मनोरंजन, मनोविनोद या समाचार अथवा सूचना पहुंचाना शामिल हैं।

अपवर्जन भागः इसमें निःशुल्क सेवा प्रदान करना या व्यक्तिगत सेवा के संविदा के अंतर्गत सेवा प्रदान करना शामिल नहीं है। समावेश भाग में, परिभाषा में कुछ 12 सेवाओं का उल्लेख किया गया है।

इसके आधार पर कुछ लोगों ने यह दलील दी कि विधायी पालिका की मंशा, केवल उन सेवाओं को अधिनियम के दायरे में लाना है जिनका उल्लेख परिभाषा में किया गया है। चिकित्सकों ने दलील दी कि इस अधिनियम का प्रचालन वाणिज्यिक लेन–देनों तक सीमित रखा जाना चाहिए क्योंकि परिभाषा के समावेश भाग में कानून के निर्माताओं ने अपनी मंशा स्पष्ट कर दी है जिसमें चिकित्सा सेवाओं को शामिल नहीं किया गया। इन परस्पर–विरोधी विचारों को समाप्त करने के लिए तीसरे संशोधन द्वारा परिभाषा के समावेश भाग में चार शब्द जोड़े गए हैं। उक्त संशोधन निम्नलिखित हैंः

"और इसमें बैंकिंग ..... से संबंधित सुविधाओं के उपबंध शामिल हैं परन्तु यह उन तक ही समित नहीं हैं....."

इस संशोधन के साथ संसद ने यह बात स्पष्ट कर दी कि इस अधिनियमन के दायरे के अंतर्गत सभी सेवाएं आती हैं, परन्तु यह केवल परिभाषा के समावेश भाग में उल्लिखित सेवाओं तक ही

सीमित नहीं है। इसे धारा 1 के खंड 4 में प्रारंभिक अध्याय में भी स्पष्ट किया गया है जो निम्नलिखित है:

> "अधिसूचना द्वारा केन्द्रीय सरकार द्वारा अभिव्यक्त रूप से अन्यथा दिए गए की स्थिति को छोड़कर, यह अधिनियम सभी सामानों और सेवाओं पर लागू होगा।"

- नकली सामानों और सेवाओं को परिभाषित करने के लिए उप–धारा (णण)जोड़ी गई है। इन सामानों और सेवाओं का अर्थ है ऐसे सामान और सेवाएं जिनके असली होने का दावा किया गया है, परन्तु वास्तव में वे असली नहीं हैं।

आज का बाज़ार अनेक नकली सामानों, औषधियों और सेवाओं से भरा पड़ा है। बेईमान व्यापारी बेरोकटोक इन नकली सामानों और सेवाओं का विपणन कर रहे हैं। इस बुराई पर नियंत्रण करने का कोई उपाय नहीं है जब तक कि मूल विनिर्माता इस मुद्दे को न उठाएं। अब तक नकली सामानों और सेवाओं के बारे में अधिनियम में कोई जिक्र नहीं था। अधिनियम में उपरोक्त शब्द जोड़ने से उपभोक्ता, बाजार पर राज करने वाले नकली सामानों और सेवाओं पर शिकायत दर्ज करने में समर्थ होंगे।

- तीसरे संशोधन के बाद हुई अन्य महत्त्वपूर्ण प्रगति यह थी कि राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर गठित की गई उपभोक्ता संरक्षण परिषदों का गठन हर हालत में

किया जाना चाहिए। इस संबंध में, धारा 4 और 7 में संशोधन किया गया। इन धाराओं के नए वाक्य विन्यास में 'हो सकता है' शब्द के बदले 'होगा' शब्द रखा गया है। इस प्रकार सरकारों के लिए यह अनिवार्य हो गया है कि वे उपभोक्ता संरक्षण परिषदों का गठन करें। इसके अलावा, 2002 के संशोधन से पहले, राज्य परिषद के सदस्यों की संख्या के बारे में कोई उपबंध नहीं था। अब धारा 7(2)(ग) में केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिकतम 10 सदस्य (सरकारी या गैर–सरकारी) मनोनीत करने का उपबंध किया गया है।

- निचले स्तर पर उपभोक्ताओं के अधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए प्रत्येक जिले में जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करना राज्य सरकारों के लिए अनिवार्य बनाने के लिए धारा 8क जोड़ी गई है।

- सबसे अधिक आवश्यक संशोधन, धारा 10 में किए गए हैं। यह धारा जिला फोरम के संघटन से संबंधित है। इन संशोधनों से पहले, बिना न्यायिक पृष्ठभूमि वाले सदस्यों के लिए कोई शैक्षिक योग्यता निर्धारित नहीं थी। इसी प्रकार आयु की कोई पाबन्दी नहीं थी। नए उपबंधों के अनुसार शिकायत निवारण एजेंसियों में

नियुक्त किए जाने वाले सदस्यों के पास किसी मान्यता–प्राप्त विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री होनी चाहिए और वह काबलियत, निष्ठा और प्रतिष्ठा वाला व्यक्ति होना चाहिए तथा उसे अर्थशास्त्र, कानून, वाणिज्य, लेखाकरण, उद्योग, लोक मामलों या प्रशासन से संबंधित समस्याएं हल करने में कम से कम 10 साल का अनुभव और पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। निर्धारित की गई अन्य योग्यता यह है कि सदस्य की आयु 35 साल से कम नहीं होनी चाहिए।

पहले सदस्य पुनर्नियुक्त किए जाने का पात्र नहीं था। परन्तु तीसरे संशोधन में अगली पदावधि के लिए पुनर्नियुक्त किए जाने का उपबंध किया गया। धारा 10(2) में किए गए इस सन्निवेश से, 65 वर्ष की आयु की ऊपरि सीमा की शर्त के अधीन एक और पदावधि के लिए एक अनुभवी सदस्य की सेवाओं का लाभ उठाने का अवसर मिलेगा। जब कोई ऐसा प्रशिक्षित सदस्य उपलब्ध हो, जो एक और पदावधि के लिए अपनी सेवाएं देने का इच्छुक हो, तो अर्ध–न्यायिक प्राधिकारी के रूप में मामलों पर न्याय–निर्णयन करने में अनुभव न रखने वाले किसी नए अभ्यर्थी को नियुक्त करने का कोई औचित्य नहीं है।

- धारा 11, 17 और 21 को संशोधित करके, जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग के आर्थिक क्षेत्राधिकार में वृद्धि की गई है। इसके परिणामस्वरूप अब जिला

फोरम का क्षेत्राधिकार ऐसी शिकायतों पर विचार करने का होगा जिनका मूल्य 20 लाख रुपए से अधिक न हो। 20 लाख रुपए से ऊपर और एक करोड़ रुपए तक की शिकायतें राज्य आयोग के क्षेत्राधिकार में आएंगी। एक करोड़ रुपए से ऊपर की सभी शिकायतें राष्ट्रीय आयोग के क्षेत्राधिकार में आएंगी। जिला फोरम और राज्य आयोग के आर्थिक क्षेत्राधिकार में वृद्धि होने से उपभोक्ताओं को अपनी शिकायतें दायर करने के लिए दूर के स्थानों पर जाने की जरूरत नहीं है। इस प्रकार, न्याय प्रदायगी प्रणाली को ग्राहकों के निकट लाया गया है।

- जो संशोधन धारा 12 के संबंध में किए गए हैं, उनसे केवल शीघ्रता से शिकायतें ही दायर नहीं की जा सकेंगी बल्कि झूठी और सारहीन शिकायतें करने वाले व्यक्ति भी हतोत्साहित होंगे।

- केन्द्रीय या राज्य सरकार, जैसी भी स्थिति हो, या तो अपनी व्यक्तिगत हैसियत से या आम उपभोक्ताओं के हित के प्रतिनिधि के रूप में, धारा 12(1)(घ) के अनुसार फोरम के समक्ष शिकायत दायर कर सकती है।

- संशोधित धारा 12(3) के अंतर्गत किसी शिकायत को नामंजूर नहीं किया जाएगा जब तक कि शिकायतकर्ता को सुनवाई का मौका न दे दिया जाए। शिकायत की स्वीकार्यता आमतौर पर उस तारीख से 21 दिन के अन्दर

तय की जाएगी, जिस तारीख को शिकायत प्राप्त हुई हो। इस उपबंध से शिकायत के शीघ्र निपटान में मदद मिलेगी।

- धारा 12(4) एक बार शिकायत स्वीकार कर लिए जाने के बाद उस शिकायत को किसी अन्य न्यायालय या न्यायधिकरण को अंतरित करने पर पाबंदी लगाती है।

- पहले, धारा 13 का शीर्षक 'शिकायत प्राप्त होने के बाद की प्रक्रिया' था। अब शीर्षक बदल कर 'शिकायत स्वीकार कर लिए जाने के बाद की प्रक्रिया' कर दिया गया है क्योंकि शिकायत स्वीकार किए बिना फोरम आगे की कार्यवाही नहीं कर सकता। "प्राप्त होने" शब्द के बदले "स्वीकार करने" कर दिए जाने से, शिकायत प्राप्त होने की तारीख के बजाए शिकायत स्वीकार करने की तारीख से प्रक्रिया आरम्भ होगी। धारा 13 में बहुत से परितर्वन हो गए हैं जो निम्नलिखित हैं:

  1. शिकायत स्वीकार किए जाने की तारीख से 21 दिन के अंदर विपक्षी पार्टी को स्वीकार की गई शिकायत की एक प्रति भेजी जानी चाहिए।

  2. यदि शिकायतकर्ता सुनवाई की तारीख को हाजिर नहीं होता तो फोरम चूक के कारण शिकायत को

खारिज कर सकता है या गुणावगुण के आधार पर निर्णय दे सकता है।

चूक के कारण शिकायत के खारिज कर दिए जाने की स्थिति में, अधिनियम में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जिससे शिकायत को पुनर्जीवित किया जा सके।

परन्तु न्यू इंडिया एश्योरैंस कम्पनी बनाम श्रीनिवासन के मामले में[4] उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि दूसरी शिकायत दायर की जा सकती है।

3. धारा 13 की नई उप–धारा 3क में विनिर्धारित किया गया है कि प्रत्येक शिकायत पर यथाशीघ्र सुनवाई की जाएगी और यह प्रयास किया जाएगा कि विपक्षी पार्टी द्वारा दिया गया नोटिस प्राप्त करने की तारीख से 3 महीने की अवधि के अंदर शिकायत पर निर्णय दे दिया जाए। यदि किसी विश्लेषण या परीक्षण की आवश्यकता हो तो शिकायत पर 5 महीने की अवधि के अंदर निर्णय दिया जाएगा।

4. पर्याप्त कारण के बिना मामला मुल्तवी नहीं किया जाएगा और मुल्तवी करने के लिए कारण दर्ज किए जाने चाहिएं।

[4] (2000) सी.पी.जे. 19 (एस.सी.)

5. मुल्तवी होने के कारण लगाया गया खर्च वसूल किया जाएगा।

6. यदि निर्धारित समय–सीमा के अंदर शिकायत पर फैसला नहीं दिया जाता है तो विलम्ब के कारण लिखित में दर्ज किए जाने चाहिएं।

7. शिकायत निवारण एजेंसियां, धारा 13 की नई उप–धारा 3ख के अंतर्गत एक अंतरिम आदेश पारित कर सकती हैं।

8. उस शिकायतकर्ता, जो उपभोक्ता है, की या विपक्षी पार्टी की मृत्यु हो जाने की स्थिति में, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की पहली अनुसूची के आदेश XXII के उपबंध लागू होंगे।

इन संशोधनों के कारण, अब यह धारा कुछ मुद्दों पर स्पष्टता प्रदान करती है और इसके अलावा शिकायतों पर फैसला देने की समय–सीमा पर भी। यह इस धारा के उपबंधों और न्याय की शीघ्र प्रदायगी को बेहतर ढंग से समझने में सुविधाजनक होगी।

- धारा 14 में किए गए संशोधन नोट किए जाने योग्य हैं क्योंकि केवल यही एक ऐसी धारा है जिसमें उस राहत का जिक्र किया गया है जो व्यथित ग्राहकों को प्रदान की जा सकती है। शिकायत निवारण एजेंसियों

को दंडात्मक हर्ज़ाना स्वीकृत करने की शक्ति प्रदान करने के लिए इस धारा के खंड (1) के उप–खंड (घ) में एक परंतुक जोड़ा गया है।

धारा 4 के खंड (1) के उप–खंड (क) का वाक्य–विन्यास इस तरीके से बनाया गया था कि वह जिला फोरम को इस बात के लिए शक्ति प्रदान करता है कि वह विपक्षी पार्टी को यह आदेश जारी करे कि वह उपयुक्त प्रयोगशाला द्वारा बताई गई खराबी को सामान से दूर करे। इस समय बहुत कम मामले प्रयोगशालाओं में भेजे जाते हैं क्योंकि ऐसा करने के लिए शिकायतें प्राप्त नहीं हो रही हैं। इसलिए जिला फोरम ही सामान में खराबी के संबंध में फैसला दे रहे हैं, यदि खराबी स्पष्ट है और संदेह से परे सिद्ध हो गई है। यदि उपयुक्त प्रयोगशाला द्वारा खराबी नहीं बताई गई है तो यह उप–खंड फोरम को यह शक्ति प्रदान नहीं करता है कि वह विपक्षी पार्टी को खराबी दूर करने का आदेश दे। इस कमी को दूर करने की दृष्टि से उप–खंड (ड.) में संशोधन किया गया है, ताकि जिला फोरम को यह शक्ति प्रदान की जा सके कि वह विपक्षी पार्टी को यह आदेश दे सके कि वह खराबी को दूर करे चाहे इसे उपयुक्त प्रयोगशाला में भेजा भी न गया हो।

उप–धाराएं (ज क), (ज ख) और (ज ग) जोड़ कर धारा 14 में महत्त्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं, जो निम्नलिखित हैं:

- (ज क): खतरनाक सामान के विनिर्माण को बंद करना और ऐसी सेवाएं प्रदान करने से रोकना जो खतरनाक किस्म की हैं।

इस धारा में किया गया सन्निवेश, खतरनाक सामान के विनिर्माताओं और सेवा प्रदायकों के लिए निवारक के रूप में काम करता है। खतरनाक सामान और सेवाओं से उपभोक्ताओं की रक्षा करने के लिए यह एक निवारक उपाय है।

- (ज ख): उतनी धनराशि का भुगतान करना जो उसके द्वारा निर्धारित की जाए, यदि उसकी यह राय हो कि ऐसे अनेक उपभोक्ताओं को क्षति हुई है, जिनकी आसानी से पहचान नहीं की जा सकती;

बशर्ते कि इस प्रकार भुगतानयोग्य न्यूनतम धनराशि प्रत्येक उपभोक्ताओं को बेचे गए खराब सामान या प्रदान की गई सेवा, जैसा भी मामला हो, के मूल्य के 5 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी;

पुनः शर्ते कि इस प्रकार प्राप्त की गई धनराशि ऐसे व्यक्ति के पक्ष में क्रेडिट की जाएगी और उसका उपयोग उस तरीके से किया जाएगा जैसे निर्धारित किया जाए;

इस उप–खंड से जनोपयोगी सेवाओं से संबंधित संगठनों के नियंत्रण में काफी परिवर्तन आएंगे।

रेलवे के खिलाफ तय किए गए एक पिछले मामले में, पहचान न किए गए उपभोक्ताओं में से अधिकांश उपभोक्ता आदेश का लाभ नहीं उठा सके। इस मामले में रेलवे ने गलती से दादर एक्सप्रैस को सुपरफास्ट गाड़ी की श्रेणी में रखा, जबकि वास्तव में यह केवल एक एक्सप्रैस गाड़ी थी। एक एक्सप्रैस गाड़ी और सुपरफास्ट गाड़ी के किराए का अन्तर शिकायतकर्ता को लौटाने का आदेश दिया गया। इस मामले में यात्रियों में से अधिकांश यात्री इस आदेश का लाभ नहीं उठा सके क्योंकि शिकायत में उनका नाम नहीं दिया गया था।

सोसाइटी फॉर सिविल राइट बनाम भारत की संघ सरकार और अन्य के मामले में[5] राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि टेलीफोन सेवाओं के अविनिर्धारित अनेक उपभोक्ताओं की ओर से शिकायत दायर की गई है। परन्तु अधिनियम की योजना में यह अपेक्षा की गई है कि एक विशिष्ट पहचान किए जाने योग्य ग्राहक या उपभोक्ता ही शिकायत दायर कर सकता है, क्योंकि केवल शिकायत दायर करने वाला उपभोक्ता ही उस राहत को प्राप्त कर सकता है जो अधिनियम के अंतर्गत प्रदान की जाए।

इन निर्णयों से पर्याप्त रूप में यह सुझाव मिलता है कि प्रमुख अधिनियम के उपबंध, पहचान न किए जा सकने योग्य उपभोक्ताओं को राहत प्रदान करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं, हालांकि लक्ष्य, इस बात को साबित करते हैं कि अनेक

[5] I (1991) सी.पी.जे. 199 (एन.सी.)

उपभोक्ताओं ने, सामान में होने वाली खराबी या सेवा में होने वाली कमी के कारण हानि उठाई है। इस प्रकार, (ज ख) के सन्निवेश से अनेक निर्दोष उपभोक्ताओं को मदद मिलेगी और यह सन्निवेश, उन उपभोक्ताओं की ओर से शिकायत दायर करने के लिए, पंजीकृत उपभोक्ता संघों को शक्ति प्रदान करेगा जिनकी आसानी से पहचान नहीं की जा सकती।

- (ज ग): भ्रामक विज्ञापन जारी करने के लिए जिम्मेदार विपक्षी पार्टी के खर्चे पर, भ्रामक विज्ञापन का प्रभाव समाप्त करने के लिए उपचारात्मक विज्ञापन जारी करना।

अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण के इस युग में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और अन्य कम्पनियों के बीच प्रतिस्पर्द्धा बढ़ रही है। उपभोक्ताओं का समर्थन हासिल करने के लिए, तीव्र प्रतिस्पर्द्धा में टिके रहने हेतु विज्ञापन एक सशक्त साधन है। विज्ञापन का खर्च अरबों डालर में बढ़ रहा है जिसका भुगतान अंततः उपभोक्ताओं और केवल उपभोक्ताओं द्वारा ही किया जा रहा है। इन विज्ञापनों में से अधिकांश में लम्बे–चौड़े दावे और झूठे दावे होते हैं। यह विज्ञापन प्रलोभन देने वाले और भ्रामक होते हैं, हालांकि इन्हें अनैतिक माना जाता है, फिर भी मौजूदा व्यवसाय वातावरण, उपभोक्ताओं को बुरी तरह हानि पहुंचा कर, उन्हीं के खर्चे पर इन विज्ञापनों को बढ़ावा दे रहा है। उप–खंड (ज ख) का सन्निवेश इन विज्ञापनों पर रोक लगाने और उपचारात्मक कार्रवाई करने के

प्रति एक कदम है। वैश्विक बाज़ार के मौजूदा परिदृश्य में यह बहुत ही सुसंगत है।

- शिकायत निवारण एजेंसियों के कार्यभार में वृद्धि के साथ इस बात की आवश्यकता है कि राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग के लिए अतिरिक्त शाखाएं स्थापित करके, बड़ी मात्रा में लम्बित मामलों का निपटान करने के लिए सदस्यों की संख्या बढ़ाई जाए। इस जरूरत को महसूस करते हुए, धारा 16 और 20 में संशोधन किया गया है, ताकि राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग में अधिक संख्या में सदस्यों की नियुक्ति करने में सुविधा हो सके। इस समय, राज्य आयोग में अध्यक्ष के अलावा केवल दो सदस्य हैं। इस संख्या को बढ़ाने के लिए अब उपबंध किया गया है। इसके अलावा, उप–धारा (1ख) जोड़ी गई है जिससे राज्य आयोग के अध्यक्ष को यह शक्ति प्राप्त होती है कि वह, साथ ही साथ मामलों पर निर्णय देने के लिए एक अतिरिक्त बैंच का गठन कर सके।

- इसी प्रकार, धारा 20 की उप–धारा (1क) राष्ट्रीय आयोग के अध्यक्ष को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह एक बैंच का गठन कर सके जिसमें अधिक सदस्यों की जरूरत पड़ेगी।

यदि राज्य स्तर और राष्ट्रीय स्तर पर बैंचों का गठन कर दिया जाए तो निपटान की दर में सुधार होगा।

- इसी प्रकार, धारा 17 और 22 में संशोधन किए गए जो राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग को न्याय के हित में शिकायतें अंतरित करने की शक्ति प्रदान करते हैं। राज्य आयोग के मामले में, शिकायतें राज्य के अंदर एक जिला फोरम से दूसरे जिला फोरम में अंतरित की जा सकती हैं। राज्य आयोग, राज्य के बाहर के जिला फोरम को कोई मामला अंतरित नहीं कर सकता। परन्तु राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्राप्त है कि वह एक राज्य के एक जिला फोरम से दूसरे राज्य के दूसरे जिला फोरम में या एक राज्य आयोग से दूसरे राज्य आयोग में मामला अंतरित कर सके। यह अंतरण या तो शिकायतकर्ता के आवेदन पर या अपने स्वयं के प्रस्ताव पर किए जा सकते हैं।

- प्रमुख अधिनियम में, मूल शिकायत के निपटान के लिए समय–सीमा दी गई थी। परन्तु राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष की गई अपीलों के लिए कोई ऐसी समय–सीमा अपेक्षित नहीं थी। अपीलों के शीघ्र निपटान के लिए एक कदम उठाया गया। राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग के लिए यह अनिवार्य करने के लिए कि वे अपील स्वीकार कर लिए जाने

की तारीख से 90 दिन की अवधि के अंदर अपीलों का निपटान करें, धारा 19–क जोड़ी गई है। तीव्र निपटान के लिए आमतौर पर कोई स्थगन मंजूर नहीं किया जाएगा जब तक कि कोई पर्याप्त कारण न दिखाया जाए। स्थगन मंजूर करते समय आयोग, स्थगन मंजूर करने के कारण लिखित में दर्ज करेगा। इस स्थगन से हुए खर्चे का दंड उस पार्टी पर लगाया जाएगा जिसने इस स्थगन की मांग की है।

- धारा 19 में किया गया एक अन्य महत्त्वपूर्ण परिवर्तन यह है कि किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा की गई अपील पर राष्ट्रीय आयोग विचार नहीं करेगा जिसे राज्य आयोग के किसी आदेश के अनुसार किसी धनराशि का भुगतान करना है, जब तक कि अपीलकर्ता धनराशि की 50 प्रतिशत राशि या 35,000/– रुपए, इनमें से जो भी कम हो, जमा न कर दे। राज्य आयोग में की जाने वाली अपील के मामले में उक्त धनराशि 50 प्रतिशत या 25000/– रुपए, इनमें से जो भी कम हो, होगी। उच्चतम न्यायालय में अपील करने के लिए अपीलकर्ता को 50 प्रतिशत धनराशि या 50,000/– रुपए, इनमें से जो भी कम हो, जमा करनी चाहिए। यह संशोधन उन लोगों के लिए निवारक का काम करेगा जो मुकदमे को सिर्फ लम्बा खींचने के लिए

अपील दायर करते हैं क्योंकि इसमें किसी फीस का भुगतान करने की जरूरत नहीं है। डिक्री धारक को या जिसके पक्ष में आदेश पारित किया गया है, उसे कोई धनराशि जमा करने की जरूरत नहीं है।

- धारा 22क, 22ख और 22ग का सन्निवेश राष्ट्रीय आयोग को निम्नलिखित प्रक्रियात्मक मामलों पर शक्ति प्रदान करेगाः

- धारा 22(2) राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह अपने द्वारा किए गए किसी आदेश की समीक्षा कर सके, जब रिकार्ड पर कोई स्पष्ट गलती हो।

- धारा 22क, शिकायतकर्ता और विपक्षी पार्टी दोनों को यह अवसर प्रदान करती है कि वे आयोग से यह आवेदन कर सकें कि उनके खिलाफ पारित एकपक्षीय आदेश को रद्द करे।

- धारा 22ख राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह न्याय के हित में कोई मामला एक फोरम से दूसरे फोरम में या एक राज्य आयोग से दूसरे राज्य आयोग में अंतरित कर सके।

- धारा 22ग राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह अपने बैठने के सामान्य स्थान के अलावा किसी अन्य स्थान पर अपना कार्य कर सके।

- धारा 22घ में, अध्यक्ष के कार्यालय में किसी रिक्ति के मामले में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया दी गई है। अब जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग का वरिष्ठतम सदस्य, अध्यक्ष की ड्यूटियां कर सकता है। राष्ट्रीय आयोग के मामले में, यदि उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश आयोग के सदस्यों के रूप में में काम कर रहे हैं तो उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीशों में से वरिष्ठतम न्यायाधीश, अध्यक्ष के कार्य करेगा। इस उपबंध से, शिकायत निवारण एजेंसियों को निर्बाध रूप से काम करने की सुविधा मिलेगी, चाहे अध्यक्ष का पद रिक्त भी पड़ा हो। इस प्रकार, शिकायत निवारण एजेंसियों के समक्ष कार्यवाही चलती रहेगी।

- शिकायत निवारण एजेंसियों को प्रदान की गई अंतरिम आदेश पारित करने की शक्तियों को ध्यान में रखते हुए, धारा 25 में किए गए संशोधन बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इस धारा की भाषा, वाक्य–विन्यास और विषय–वस्तु में पुरानी धारा के मुकाबले पूरी तरह परिवर्तन हो गया है। संशोधन के अनुसार, यदि इस अधिनियम के

अंतर्गत दिए गए किसी अंतरिम आदेश का अनुपालन नहीं किया जाता है तो शिकायत निवारण नहीं एजेंसियां उस व्यक्ति की सम्पत्ति कुर्क करने का आदेश दे सकती हैं। यदि अनुपालन न करने की स्थिति तीन महीने तक बनी रहती है तो कुर्क की गई सम्पत्ति को बेचा जा सकता है और बिक्री से प्राप्त धनराशि में से शिकायतकर्ता को हुई क्षति का अवार्ड दिया जाएगा और यदि कुछ राशि शेष बचती है तो उसका भुगतान, राशि की हकदार पार्टी को किया जाएगा।

- पहले यदि शिकायत निवारण एजेंसी के आदेश का अनुपालन नहीं किया जाता था तो उसे यह शक्ति प्राप्त थी कि वह आदेश को इस प्रकार लागू कराए जैसे कि वह किसी लम्बित मुकदमें में न्यायालय द्वारा दिया गया आदेश या डिक्री हो। परन्तु आदेश को लागू कराने में असामान्य विलम्ब हो जाया करता था। कुछ मामलों में शिकायत निवारण एजेंसियों द्वारा पारित किए गए आदेश कुछ कारणों से लागू ही नहीं हो पाते थे। संभवतः, इस स्थिति में सुधार लाने के लिए, पार्टी को देय धनराशि की वसूली भू–राजस्व की बकाया राशि की तरह करने की जिम्मेदारी, जिला कलैक्टर (चाहे उसे किसी भी नाम से पुकारा जाता

हो) को दी गई है। शिकायत एजेंसी के किसी आदेश से धनराशि का हकदार व्यक्ति शिकायत एजेंसी को आवेदन कर सकता है कि वह उक्त राशि के लिए एक प्रमाणपत्र जिला कलैकटर को जारी करे। धारा 25 के अंतर्गत अपील करने का कोई उपबंध नहीं है।

- धारा 27 को इस मायने में कठोर बना दिया गया है कि अब शिकायत निवारण एजेंसियों को यह शक्ति नहीं है कि वे धारा में विनिर्धारित की गई सज़ा से कम सज़ा दे सकें। इन संशोधनों से पहले कम सज़ा देने का एक परंतुक था जिसका अब विलोप कर दिया गया है। चूंकि इस धारा में, आदेश के उल्लंघन के लिए व्यक्ति को कारावास की सज़ा विनिर्धारित की गई है, इसलिए ऐसा आदेश देने के लिए किसी न्यायिक मजिस्ट्रेट की शक्तियों की आवश्यकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए, तीसरा संशोधन, इस अधिनियम के अंतर्गत अपराधों के लिए, शिकायत निवारण एजेंसियों को प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट की शक्तियां प्रदान करता है। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के उद्देश्य के लिए इन शिकायत निवारण एजेंसियों को प्रथम श्रेणी का न्यायिक मजिस्ट्रेट माना जाएगा।

- धारा 27 की उप–धारा (3) में सुझाव दिया गया है कि इस अधिनियम के अंतर्गत सभी अपराधों के लिए शिकायत निवारण एजेंसियों द्वारा संक्षिप्त मुकदमा चलाया जा सकता है।

महाबीर सिंह देशवाल बनाम मैसर्स एरोमा हैंडलूम स्टोर[6] के मामले में राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि धारा 27 के अंतर्गत दिए गए किसी आदेश के खिलाफ कोई अपील नहीं की जा सकती, जब तक कि शिकायत निवारण एजेंसी ने उस क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल न किया हो जो कानून के अनुसार उसे प्राप्त नहीं है या वह इस प्रकार प्राप्त क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल करने में विफल न हो या अपने क्षेत्राधिकार का इस्तेमाल बहुत अनियमितता के साथ किया हो। संसद ने अपने विवेक से विचार किया कि धारा 27 के अंतर्गत आदेश को अपीलयोग्य बनाया जाना चाहिए। इस प्रकार धारा 27 के अंतर्गत पारित किए गए आदेश के खिलाफ अपील करने का उपबंध बनाने के लिए एक नई धारा 27–क जोड़ी गई है और साथ ही साथ इससे इस धारा के अंतर्गत किए गए आदेश के खिलाफ की गई अपील पर विचार करने के अन्य न्यायालयों का क्षेत्राधिकार भी समाप्त हो गया। इस धारा का वाक्य–विन्यास निम्नलिखित है:

[6] III (1995) सी.पी.जे. 71 (एन.सी.)

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में किसी अन्य बात के होते हुए भी, तथ्यों और कानून दोनों के आधार पर, धारा 27 के अंतर्गत निम्नलिखित के खिलाफ अपील की जा सकेगी:

(क) जिला फोरम द्वारा दिए गए आदेश के खिलाफ राज्य आयोग में।

(ख) राज्य आयोग द्वारा दिए गए आदेश के खिलाफ राष्ट्रीय आयोग में।

(ग) राष्ट्रीय आयोग द्वारा दिए गए आदेश के खिलाफ उच्चतम न्यायालय में।

प्रत्येक अपील, आदेश की तारीख से 30 दिन के अंदर दायर की जाएगी जब तक कि 30 दिन के अंदर अपील दायर न करने के लिए पर्याप्त कारण न दर्शाए गए हों।

(2) उपरोक्त स्थिति को छोड़कर, जिला फोरम, राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग के किसी आदेश के खिलाफ किसी न्यायालय में कोई अपील दायर नहीं की जा सकेगी।

- धारा 28क जोड़कर एक संशोधन किया गया जिससे नोटिसों की शीघ्र तामील हो सकेगी। इस नई धारा के अनुसार, इस अधिनियम के अंतर्गत तामील किए जाने वाले सभी नोटिसों की तामील पंजीकृत डाक से, स्पीड पोस्ट से, कोरियर द्वारा या फैक्स संदेश सहित

दस्तावेजों के सम्प्रेषण के किसी माध्यम से की जाएगी।

खंड (3) उन लोगों के लिए निवारक के रूप में काम कर सकता है जो शिकायत निवारण एजेंसियों का नोटिस लेने से इंकार कर देते हैं क्योंकि नया उपबंध शिकायत निवारण एजेंसियों को इस बात के लिए समर्थ बनाता है कि वे इस बात की घोषणा कर सकें कि नोटिस की तामील विधिवत् कर दी गई है, यदि डाकखाने का कर्मचारी या अधिकृत कोरियर एजेंट इस बात का पृष्ठांकन कर देता है कि विपक्षी पार्टी या उसके एजेंट या शिकायतकर्ता ने नोटिस वाली वस्तु की सुपुर्दगी लेने से इंकार कर दिया है या उप–धारा (2) में विनिर्धारित किए गए किसी अन्य तरीके से भेजे गए नोटिस को लेने से इंकार कर दिया।

नोटिसों से संबंधित अन्य महत्त्वपूर्ण सन्निवेश उप–धारा (4) में है जो निम्नलिखित हैः

> "किसी विपक्षी पार्टी या शिकायतकर्ता को तामील किए जाने वाले सभी नोटिस, पर्याप्त रूप से तामील किए गए माने जाएंगे यदि, विपक्षी पार्टी के मामले में, उस स्थान पर भेजे गए हों, जहां व्यवसाय किया जाता है और शिकायतकर्ता के मामले में, उस स्थान पर भेजे गए हों, जहां ऐसा व्यक्ति वास्तव में और स्वेच्छा से रहता हो।"

इस उप–खंड से वैकल्पिक सेवा द्वारा नोटिस भेजने की प्रक्रिया समाप्त हो सकती है और इस प्रकार शिकायत के शीघ्र निपटाने के लिए समय की बचत हो सकती है।

इन तीसरे संशोधनों द्वारा सृजित नोट करने योग्य अन्य उपबंध, धारा 30–क का सन्निवेश है, जो राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह इस अधिनियम के उपबंधों को लागू करने के उद्देश्य के लिए केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से विनियम बना सके। केन्द्र सरकार भी आदेश द्वारा उस कठिनाई को दूर कर सकती है, जो इस अधिनियम के उपबंधों को लागू करने में उत्पन्न हो सकती है। केन्द्र सरकार किसी आदेश द्वारा उस कठिनाई को दूर कर सकती है जो उपभोक्ता संरक्षण (संशोधन) अधिनियम, 2002 के उपबंध दो साल के अंदर लागू करने में उत्पन्न हो सकती है। ऐसे आदेश संसद के दोनों सदनों के समक्ष पेश किए जाएंगे (धारा 31)। परन्तु विनियम बनाने की राष्ट्रीय आयोग की शक्ति के मामले में ऐसी कोई समय–सीमा निर्धारित नहीं की गई है। जब कभी इस अधिनियम के उपबंधों को लागू करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है, तो राष्ट्रीय आयोग, लाए जाने वाले किसी संशोधन की इंतजार किए बिना, विनियम बना सकता है। अधिनियम में संशोधन लाना एक समय लगने वाली प्रक्रिया है और इसलिए धारा 30 के सन्निवेश से, विनियम बनाकर, कठिनाइयां दूर की जा सकेंगी।

आगे संशोधनों के लिए गुंजाइश

प्रस्तावना में उल्लिखित उद्देश्यों और कारणों के विवरण में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि उपभोक्ता संरक्षण विधेयक, 1986 में उपभोक्ताओं के हितों को बेहतर ढंग से सुरक्षा प्रदान करने का प्रयत्न किया गया है और इसमें अन्य बातों के साथ–साथ, उपभोक्ताओं के अधिकारों जैसे सुरक्षा का अधिकार, सूचना का अधिकार, चयन करने का अधिकार, सुनवाई का अधिकार, शिकायत निवारण का अधिकार और उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार, को बढ़ावा देने तथा उनकी रक्षा करने का प्रयत्न किया गया है। राष्ट्रीय, राज्य और जिला स्तरों पर स्थापित की गई उपभोक्ता परिषदों द्वारा इन अधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने का प्रयत्न किया गया है। परन्तु यह जिम्मेदारी अधिनियम के अंतर्गत गठित शिकायत निवारण एजेंसियों को नहीं सौंपी गई है। केवल इसलिए क्योंकि उद्देश्यों और कारणों के विवरण में कुछ 6 अधिकारों का उल्लेख किया गया है, क्या ऐसे अधिकार प्रवर्तनीय हो सकते हैं? अश्वनी कुमार घोष और अन्य बनाम अरबिन्दा बोस और अन्य के मामले में[7] उच्चतम न्यायालय ने उद्देश्यों और कारणों के विवरण की सुसंगतता की व्याख्या की। उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित व्यवस्था दीः "जहां तक उद्देश्यों और कारणों के विवरण के संदर्भन की उपयुक्तता का संबंध है, यह बात याद रखी जानी चाहिए कि इसमें केवल यह स्पष्ट करने का प्रयत्न किया

[7] ए.आई.आर. 1952 एस.सी. 362

गया है कि किन कारणों ने प्रस्तावक को, सदन में विधेयक पेश करने के लिए प्रेरित किया और वह किन उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहता था। इसी प्रकार, ए.सी. शर्मा बनाम दिल्ली प्रशासन के मामले में[8] उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी दीः

> "संसद में विधेयक पेश करने के लिए उद्देश्यों और कारणों का विवरण, यथा अधिनियमित कानून के बनाए जाने में सहायक के रूप में स्वीकार्य नहीं है परन्तु क्या यह, अधिनियम में इस्तेमाल किए गए वास्तविक शब्दों के अर्थ को नियंत्रित कर सकता है? इसे केवल ऐसी परिस्थितियों का पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए माना जा सकता है जिन्होंने इस बिल को पेश करने और ऐसा करने के उद्देश्य के लिए प्रस्तावक को प्रेरित किया।"

उपरोक्त चर्चा को देखते हुए, इन अधिकारों की क्या स्थिति है?

पुनः अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत अधिकारों के उसी सैट को केन्द्रीय, राज्य और जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषदों के उद्देश्यों के रूप में दोहराया गया है। उद्देश्यों का विशेष रूप से उल्लेख करने को छोड़कर, उन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इन परिषदों की शक्तियां व्यक्त करने हेतु इस अधिनियम में आगे कुछ भी उल्लेख नहीं किया गया है। इस बात का उल्लेख नहीं किया गया कि अधिनियम में दिए गए अधिकारों के उल्लंघन की

[8] ए.आई.आर. 1973 (एस.सी.) 913

स्थिति में यह परिषदें क्या कार्रवाई कर सकती हैं। उल्लंघन की स्थिति में कोई उपचार उपलब्ध नहीं कराया गया है। जहां कोई उपचार नहीं है, ऐसी स्थिति में कोई अधिकार नहीं होता। ज्यादा से ज्यादा कोई व्यक्ति यह कह सकता है कि यह अधिकार काल्पनिक हैं और वास्तविक नहीं।

दिलचस्प बात यह है कि इन अधिकारों के बारे में अध्याय III में कोई उल्लेख नहीं है। इस अध्याय के अंतर्गत केवल धारा 14 ही ऐसी है जिसमें उपभोक्ता की समस्याओं के कुछ उपचार दिए गए हैं। धारा 14(1) उपभोक्ताओं को उपलब्ध, विभिन्न उपचारों से संबंधित है परन्तु जहां तक उद्देश्यों और कारणों के विवरण में उल्लिखित अधिकारों का संबंध है, इसमें केवल सीमित राहत ही उपलब्ध है। इसलिए, यह अधिकार, भारत के संविधान में दिए गए सरकार के नीति निर्देशक सिद्धान्तों की तरह हैं। अधिनियम के अंतर्गत गठित की गई शिकायत निवारण एजेंसियां केवल वही राहत प्रदान कर सकती हैं जिनका उल्लेख अधिनियम की धारा 14 में किया गया है। राजस्थान राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग द्वारा तय किए गए राजस्थान राज्य बिजली बोर्ड बनाम नटवारला के मामले[9] में और राष्ट्रीय आयोग द्वारा तय किए गए राजस्थान राज्य औद्योगिक निगम बनाम प्रीमियर पेन्ट्स के मामले[10] में यह व्यवस्था दी गई कि शिकायत निवारण एजेंसियां केवल वही राहत प्रदान कर सकती हैं जिनका जिक्र अधिनियम

[9] (1992)I सी.पी.आर. 168
[10] (1991)II सी.पी.आर. 168

की धारा 14(1) में किया गया है और उससे अधिक नहीं। इस धारा 14(1) में निम्नलिखित अधिकारों के संबंध में उपभोक्ता को सीमित राहत प्रदान करने के उपबंध हैं: (1) जीवन और सम्पत्ति के लिए खतरनाक सामान को विपणन के प्रति सुरक्षा का अधिकार; और (2) धारा 2(1)(ग) के अंतर्गत यथा उल्लिखित अनुचित श्रम व्यवहार के प्रति उपभोक्ता को सुरक्षा प्रदान किए जाने का अधिकार।

धारा 6 में उल्लिखित अधिकारों को प्रवर्तनीय बनाने की दृष्टि से धारा 2(1)(ग) और धारा 14(1) में आवश्यक संशोधन किए जा सकते हैं। शिकायतकर्ता द्वारा लिखित में लगाए गए इस आरोप, कि किसी व्यक्ति ने, धारा 6 में सूचीबद्ध किए गए अधिकारों का उल्लंघन किया है, को शिकायत माना जाना चाहिए और तदनुसार इन अधिकारों के उल्लंघन के मामले में राहत प्रदान के लिए शिकायत निवारण एजेंसियों को शक्ति प्रदान करने हेतु धारा 14(1) में उचित राहत शामिल की जानी चाहिए। आश्चर्य की बात है कि अधिनियम के अंतर्गत स्थापित उपभोक्ता संरक्षण परिषदों ने अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित मुद्दों पर चर्चा नहीं की। राज्य सरकारों या केन्द्रीय सरकार को अभी इन शिकायत निवारण एजेंसियों के समक्ष शिकायत दायर करनी है जिसमें अधिकारों से संबंधित यह प्रार्थना की गई हो कि भारतीय बाजारों में कोई उल्लंघन नहीं किया जा रहा है। इसके अलावा, अधिनियम

में दो और अधिकार शामिल किए जाएं जिससे उपभोक्ताओं को बेहतर सुरक्षा प्रदान की जा सके, अर्थातः

(1) मौलिक आवश्यकताओं का अधिकार; और (2) स्वस्थ वातावरण में रहने का अधिकार।

धारा 2 में, अधिनियम की धारा 25 में उल्लिखित अभिव्यक्ति प्रमाणपत्र के सन्निवेश की आवश्यकता है।

धारा 2(1)(घ) में इस प्रकार संशोधन किया जा सकता है कि उसमें संभावित खरीददार शामिल किया जा सके। ऐसे व्यक्ति, जो इस कारण सामान खरीदने से रह जाता है कि उसकी राय में बिक्री के लिए प्रस्तावित सामान खतरनाक है या अपेक्षित सूचना नहीं दी जा रही है या प्रतिस्पर्द्धी कीमतों पर सामान की किस्में नहीं दिखाई जा रही हैं, को एक संभावित खरीददार माना जाता है। उसे भी ऐसे व्यापारी के खिलाफ शिकायत दायर करने का अधिकार होना चाहिए जो इन अधिकारों का उल्लंघन करता हो।

इसी प्रकार, अधिनियम के अंतर्गत स्थापित उपभोक्ता संरक्षण परिषदों को धारा 2(1)(ख) के अंतर्गत शिकायतकर्ता की परिभाषा में शामिल किया जा सकता है क्योंकि इन परिषदों को स्थापित करने का उद्देश्य ही उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा करना है।

उपभोक्ता फोरमों को स्वविवेक पर मुद्दे उठाने की शक्ति प्रदान की जा सकती है जो बेईमान व्यापारियों के लिए निवारक का काम करेगी। इससे बाजार स्थानों में चल रहे अनाचार पर भी रोक लग सकती है जिसे रोकना उपभोक्ताओं के लिए मुश्किल होता है।

धारा 2(द)(1), जो अनुचित व्यापार व्यवहार की परिभाषा से संबंधित है, में भी संशोधन किया जा सकता है जिससे जमा राशि की शीघ्र वापसी के लिए प्रधान/विनिर्माता के साथ मामला आगे बढ़ाने के लिए डीलरों/स्थानीय एजेंटों को जिम्मेदार बनाया जा सके। चूंकि भारतीय बाजार में, सामान की आपूर्ति के लिए बड़ी बुकिंग राशि जमा करना एक प्रचलित प्रैक्टिस है और यह जमा राशियां, बुकिंग रद्द किए जाने के बाद भी शीघ्र नहीं लौटाई जातीं। धारा 2(द)(1) के अंतर्गत निम्नलिखित परंतुक जोड़े जा सकते हैं:

"वह उपभोक्ता को प्रलोभन देता है कि वह प्रमुख/विनिर्माता के पास कुछ धनराशि जमा करे और परिपक्वता पर या बुकिंग के रद्द कर दिए जाने पर उक्त जमा राशि लौटाने से मना कर देता है" – ऐसे व्यवहार को अनुचित श्रम व्यवहार माना जाता है।

इसी प्रकार, एक तरफा करार भी अनुचित श्रम व्यवहार के अंतर्गत आता है।

भारत में, अनेक कानूनों का अधिनियमन उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के लिए किया गया है, विशेष रूप में सभी जनोपयोगी सेवाएं अपने–अपने अधिनियमों के अंतर्गत आती हैं। अनावश्यक मुकदमेबाजी को कम करने की दृष्टि से, सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार कुछ अधिनियमों में समाप्त कर दिए गए। यदि अन्य न्यायालयों का क्षेत्राधिकार समाप्त करने के लिए, ऐसा कोई खंड मुकदमें में नहीं जोड़ा जाता है, तो विपक्षी पार्टी के लिए यह प्रथागत है कि वह यह दलील दे कि उपभोक्ता न्यायालयों को क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि उनकी सेवाएं एक अलग अधिनियम द्वारा नियंत्रित होती हैं। आजकल, अन्य न्यायालयों के क्षेत्राधिकार समाप्त करने के लिए विभाग अपने–अपने अधिनियमों में संशोधन करने की कोशिश कर रहे हैं। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम का अधिनियमन, उपभोक्ताओं की बेहतर सुरक्षा के लिए किया गया है क्योंकि उपभोक्ता संरक्षण के लिए अधिनियमित किए गए अन्य कानून, इस उद्देश्य को प्राप्त करने में बुरी तरह विफल हो गए। चूंकि वे अप्रभावी हो गए, इसलिए इस अधिनियम का अधिनियमन, उपभोक्ताओं को दिए जाने वाले अतिरिक्त उपचार के रूप में किया गया। अधिनियम की धारा 3 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह अधिनियम फिलहाल किसी अन्य कानून के उपबंधों के अतिरिक्त होगा और उसके विपरीत नहीं। यदि संसद की

मंशा वास्तव में इस अधिनियम को सही अर्थ में उपभोक्ताओं के लिए एक अतिरिक्त उपचार बनाने की है, तो धारा 3 में निम्नलिखित संशोधन किए जाएं:

"इस समय लागू किसी अन्य कानून के उपबंधों में दी गई किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के उपबंध, एक अतिरिक्त उपचार होगा और इनका अनुपालन इस समय लागू अन्य कानूनों के उपबंधों के साथ सामंजस्य के साथ किया जाएगा। शिकायत निवारण एजेंसियों को उन सामानों और सेवाओं से संबंधित सभी विवादों पर कार्रवाई करने का क्षेत्राधिकार प्राप्त होगा जिन्हें इस अधिनियम के उपबंधों से केन्द्रीय सरकार द्वारा स्पष्ट रूप से अलग नहीं किया गया है।"

इस अधिनियम के अंतर्गत स्थापित की गई उपभोक्ता संरक्षण परिषदों को, उपभोक्ताओं की विभिन्न समस्याओं पर चर्चा करने और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने हेतु निवारक उपाय करने के लिए अधिक बार बैठकें करनी चाहिएं। इस प्रकार धारा 5, 7(3) और 8क(3) में इस प्रकार संशोधन किया जा सकता है ताकि उसमें केन्द्रीय परिषद की कम से कम दो अनिवार्य बैठकें करने का उपबंध किया जाए और उन्हें राज्य परिषद तथा जिला परिषद की वरीयतः तीन महीने में एक बार बैठक करनी चाहिए। बार–बार बैठकें करने से यह परिषदें, उपयुक्त

निवारक उपाय करने के लिए मौजूदा समस्याओं पर चर्चा करने में सक्षम होंगी। इन परिषदों की सिफारिशों को संबंधित सरकार द्वारा चाहे कितनी भी अच्छी तरह लागू किया जाए, परन्तु हर तीन महीने में उसकी समीक्षा की जाएगी। इससे परिषदों को यह सुविधा मिलेगी कि वे परिषदों के संकल्पों को ठंडे बस्ते में डाले जाने से पहले सरकार के साथ मामला आगे बढ़ाएं।

धारा 10(1)(ख) के अंतर्गत किए गए मौजूदा संशोधनों में सदस्यों के लिए कुछ योग्यताएं निर्धारित की गई हैं। उल्लिखित योग्यता के अलावा यह भी अपेक्षित है कि सदस्य, उपभोक्ता विवाद को सुलझाने के तरीके की आवश्यक दक्षता और उपभोक्ताओं से संबंधित समस्याओं, बाजार की प्रथाओं और युक्तियों की जानकारी भी रखता हो तथा सबसे बड़ी बात यह है कि उसे उपभोक्ता शिक्षा में या उपभोक्ताओं में जागरूकता सृजित करने का अनुभव प्राप्त हो। बाजार संबंधी विषयों के मुकाबले उपभोक्ता संबंधी मुद्दों की जानकारी रखने वाला व्यक्ति, सदस्य के रूप में अच्छा काम करेगा। वह अपनी दक्षता का प्रदर्शन, अपनी पृष्ठभूमि के साथ उपभोक्ता विवादों के निवारण में करेगा।

धारा 12(1)(घ) और धारा 2(1)(घ) में विरोधाभास प्रतीत होता है। धारा 12(1)(क) की भाषा निम्नलिखित हैः

"उपभोक्ता वह होता है जिसे सामान बेचा जाता है या बेचने की सहमति दी जाती है या सुपुर्दगी दी जाती है या सेवा प्रदान की जाती है या प्रदान करने की सहमति दी जाती है जबकि धारा 2(1)(घ) में उपभोक्ता की परिभाषा में ऐसा व्यक्ति शामिल नहीं है जिसे सामान बेचने की सहमति दी जाती है या जिसे सेवा प्रदान करने की सहमति दी जाती है।" इसलिए धारा 2(1)(घ) में इस प्रकार संशोधन किया जा सकता है ताकि उसमें ऐसे व्यक्ति शामिल किए जा सकें जिन्हें सामान बेचने या सुपुर्दगी करने या सेवा प्रदान किए जाने की सहमति दी गई हो।

धारा 12(2) में, 25000/– रुपए से कम मूल्य के दावों वाली शिकायतों के लिए कोई फीस न लेने से संबंधित उपयुक्त संशोधन किया जा सकता है।

धारा 12 में ऐसे व्यक्तियों की सूची दी गई है जो शिकायत दायर कर सकते हैं। इस धारा को इस प्रकार संशोधित किया जा सकता है ताकि उसमें अधिनियम के अंतर्गत स्थापित की गई उपभोक्ता संरक्षण परिषदों को शामिल किया जा सके।

धारा 12(ख), मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघों को यह शक्ति प्रदान करती है कि वे उपभोक्ता की ओर से शिकायतें दर्ज कर सकें। इस धारा में ऐसा संशोधन किया जा

सकता है जिसकी यह भाषा हो कि यह मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघ, अपनी व्यक्तिगत हैसियत से या आम उपभोक्ताओं के हितों के प्रतिनिधि के रूप में शिकायत दायर कर सकते हैं। यदि मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघों को ऐसा अवसर दिया जाए तो वे बड़ी संख्या में उपभोक्ताओं के लाभ के लिए अधिक मामले उठा सकते हैं।

शिकायत निवारण एजेंसियों को कोई अंतरिम आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करने की एक बहुत लम्बे समय से महसूस की जा रही आवश्यकता अब, धारा 13 में उप–धारा 3–ख के जोड़ दिए जाने से पूरी हो गई है। अब सवाल यह है कि फोरम किस प्रकार के अंतरिम आदेश पारित कर सकता है? उपरोक्त धारा इस बात को स्पष्ट करती है कि ऐसा अंतरिम आदेश, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के हिसाब से न्यायपूर्ण और उचित होना चाहिए। क्या इसका अर्थ यह है कि अंतरिम आदेश धारा 14 के दायरे से बाहर भी पारित किया जा सकता है?

प्रबंधक, मिल्क चिल्लिंग सैंटर बनाम महबूबनगर नागरिक परिषद के मामले[11] में राज्य आयोग ने आंध्र प्रदेश डेयरी विकास सहकारी संघ लिमिटेड को निर्देश दिया कि वह कम से कम तीन प्रतिशत फैट वाला दूध अधिक से अधिक दो रुपए प्रति आधा

[11] II (1991) सी.पी.जे. 592

लीटर और डबल टोंड दूध चार रुपए प्रति लीटर तथा मानक दूध 5.50 रुपए प्रति लीटर के उचित मूल्य पर थैलियों में सप्लाई करे। राष्ट्रीय आयोग ने यह व्यवस्था दी कि शिकायत निवारण एजेंसी केवल वही राहत प्रदान कर सकती है जिनका जिक्र अधिनियम की धारा 14 की उप–धारा (1) के खंड (क) से (घ) में किया गया है और कि राज्य आयोग द्वारा जारी किए गए निर्देशों को इन खंडों के दायरे में नहीं लाया जा सकता।

इन निर्णयों को देखते हुए, इस संबंध में मामला स्पष्ट नहीं है कि जिला फोरम किस तरह की राहत दे सकता है। यदि शिकायत निवारण एजेंसियां अपनी शक्तियां केवल धारा 14 के उपबंधों तक सीमित रखती हैं तो मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के हिसाब से शिकायत निवारण एजेंसियों द्वारा कोई न्यायपूर्ण और उचित अंतरिम आदेश कैसे पारित किया जा सकता है?

अन्नामलाई फाइनेंस लिमिटेड बनाम एस.एम.एन. उपभोक्ता संरक्षण परिषद् के मामले[12] राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि धारा 14 के अंतर्गत उपभोक्ता फोरमों को यह शक्ति प्राप्त नहीं है कि वह कोई निर्देश दे सके।

ऐसे उपरोक्त निर्णयों के बीच, अधिनियम के अंतर्गत गठित शिकायत निवारण एजेंसियों को क्या ऐसी शक्तियां प्राप्त हैं कि वह बी.एस.एन.एल. या बिजली विभाग जैसे सेवा प्रदायकों को

[12] I (1992) सी.पी.जे.6 (एन.सी.)

यह निर्देश दे सके कि वे सेवा विच्छेद न करें या सेवा को पुनर्स्थापित करें।

राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड बनाम उपभोक्ता संरक्षण परिषद् और अन्य के मामले[13] में राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि अधिनियम की धारा 14(1) के अंतर्गत दिए गए अंतिम आदेश द्वारा प्रदान की जा सकने वाली राहत भी किसी अंतरिम आदेश द्वारा प्रदान नहीं की जा सकती।

आमतौर पर, अंतरिम आदेश देने की प्रार्थना विपक्षी पार्टी को यह निर्देश देने के लिए की जाती है कि वह इस तरीके से काम न करे जो याचिकाकर्ता के हितों के प्रतिकूल हो। ऐसी परिस्थितियों में शिकायत निवारण एजेन्सियां, न्याय के हित में इस अनुमान के अधीन निर्देश दे सकती हैं कि ऐसी शक्ति उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त है।

इन निर्णयों को ध्यान में रखते हुए, धारा 13(3ख) में इस प्रकार संशोधन किया जा सकता है कि शिकायत निवारण एजेंसियों को ऐसी शक्ति प्रदान की जा सकें कि वे निर्देश देने वाले ऐसे अंतरिम आदेश पारित कर सकें और यदि आवश्यक हो तो वे अधिनियम की धारा 14(1) में दिए गए उपबंधों तक सीमित न रहें।

[13] II (1992) सी.पी.जे.247 (एन.सी.)

धारा 13 के अंतर्गत विवादों के निपटान के लिए एक समय–सीमा भी दी गई है। अनेक विवादों में इस समय–सीमा का पालन करना मुश्किल होता है। वास्तव में विपक्षी पार्टी को नोटिस देना धारा (1)(क) के अंतर्गत अनिवार्य होता है। दूसरी बात यह है कि अधिनियम के अंतर्गत मुकदमे की एक पार्टी इस बात की हकदार है कि उसे विरोधी पक्ष द्वारा पेश किए गए गवाहों के साथ जिरह करने का उचित अवसर मिले। नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन करने की दृष्टि से, जैसा कि नर्मदा सीमेंट कम्पनी लिमिटेड बनाम होटल नन्दादीप और अन्य के मामले[14] में राष्ट्रीय आयोग द्वारा अवलोकन किया गया कि न्याय केवल किया ही नहीं जाना चाहिए बल्कि ऐसा लगना भी चाहिए कि न्याय किया गया है। इसलिए, निपटान के लिए 3 महीने की अवधि निश्चित करने के बजाए समय–सीमा 4 महीने तक बढ़ाई जा सकती है ताकि इस आलोचना से बचा जा सके कि पार्टियों को उचित अवसर नहीं दिया जा रहा है।

बाजार स्थल, अनुचित प्रथाओं से भरे पड़े हैं और अधिकांश उपभोक्ताओं का शोषण केवल इन प्रथाओं के कारण होता है कि ऐसी प्रथाएं, परिभाषा में सूचीबद्ध की गई प्रथाओं के मुकाबले काफी अधिक हैं। अनुचित व्यापार प्रथाओं पर नियंत्रण रखने का अर्थ है, बाजार प्रथा स्थलों में प्रचलित अनेक बुराइयों को दूर करना। हालांकि इन प्रथाओं को कुछ हद तक उचित

[14] (1992) सी.पी.जे.245 (एन.सी.)

व्यापार परिषदों, उपभोक्ता संगठनों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है परन्तु फिर भी कानून की शक्ति का निश्चित रूप से अधिक प्रभाव पड़ेगा। हालांकि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत ऐसी प्रथाओं को प्रमुखता से दर्शाया गया है परन्तु इनके प्रभावी उपाय नहीं दिए गए हैं। धारा 14(1)(च) के अंतर्गत दी गई राहत, विपक्षी पार्टी को यह निर्देश देना है कि वह अनुचित व्यापार प्रथा को बंद करे या उसे न दोहराए। यह राहत अनेक उपभोक्ताओं को भविष्य में लाभ प्रदान कर सकती है परन्तु इससे शिकायतकर्ता को कोई राहत नहीं मिलती। एक मामले में यह निर्णय दिया गया कि यदि कोई शिकायतकर्ता, शिकायत दायर करता है जिसमें अनुचित व्यापार प्रथा का आरोप लगाया गया हो, तो फोरम धारा 14(1)(च) के अनुसार राहत प्रदान कर सकते हैं परन्तु वे मुआवजे प्रदान नहीं कर सकते। इस निर्णय से यह सुझाव मिलता है कि धारा 14(1)(च) में ऐसा संशोधन किए जाने की आवश्यकता है जिससे फोरमों को यह शक्ति प्रदान की जा सके कि वे उन शिकायतकर्ताओं और अन्य विभिन्न उपभोक्ताओं को मुआवजे/दंडात्मक क्षति की राशि देने का आदेश दें जिन्हें इन अनुचित व्यापार प्रथाओं के कारण हानि या क्षति पहुंची है।

अधिनियम में संशोधन करके धारा 14 की उप–धारा (1) में जोड़ा गया एक नया खंड फोरमों को यह शक्ति प्रदान करता है कि वे ऐसे अनेक उपभोक्ताओं को उस धनराशि का भुगतान करने का आदेश दें जिनकी आसानी से पहचान नहीं की जा सकती।

इस खंड में इस संबंध में स्पष्टीकरण की आवश्यकता पड़ सकती है कि क्या ऐसे उपभोक्ता, जो फोरमों के समक्ष पर्टियां नहीं हैं, उस मुआवजे के हकदार हैं जो इस उप–खंड के अंतर्गत और उसमें निर्धारित की गई प्रक्रिया के अंतर्गत दिया जा सकता है।

सोसायटी ऑफ सिविल राइट्स बनाम भारत की संघ सरकार के मामले[15] में राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि अधिनिर्धारित संख्या में उपभोक्ताओं की ओर से दायर की गई शिकायत, अधिनियम के उपबंधों के अनुसार नहीं है। उक्त निर्णयों को ध्यान में रखते हुए खंड (ज ब) को स्पष्ट किए जाने की आवश्यकता है।

भुगतानयोग्य न्यूनतम धनराशि में, बेचे गए खराब सामान या प्रदान की गई दोषपूर्ण सेवा के मूल्य को 5 प्रतिशत के बजाए बढ़ाकर 10 प्रतिशत किया जा सकता है। इसके अलावा, परंतुक में भी ऐसे संशोधन की आवश्यकता है ताकि वह फोरमों को यह शक्ति प्रदान कर सकें कि वे उक्त धनराशि उनके खाते में या जिला, राज्य या राष्ट्रीय उपभोक्ता कल्याण निधि, जैसा भी मामला हो, में क्रेडिट कर सकें।

धारा 14(2) के अनुसार, अध्यक्ष को कम से कम एक सदस्य के साथ प्रत्येक कार्यवाही करनी चाहिए। धारा 14(2–क) इस बात को अनिवार्य बनाती है कि प्रत्येक आदेश पर आवश्यक रूप से अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिएं। परन्तु तीसरे

[15] (1991) I सी.पी.आर. 104 (एन.सी.)

संशोधन द्वारा जोड़ी गई धारा 22–घ, जिला फोरम के वरिष्ठतम सदस्य को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह, अध्यक्ष की ड्यूटियां करे, यदि अध्यक्ष अपनी ड्यूटी करने में अक्षम हो या उसका पद रिक्त हो जाए। धारा 22 में किए गए इस अद्यतन संशोधन को ध्यान में रखते हुए, धारा 14(2) और धारा 14(2–क) में तदनुसार संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

हालांकि नकली सामान और सेवाओं की परिभाषा धारा 2 (ण ण) के अंतर्गत दी गई है परन्तु उन व्यक्तियों को कोई राहत नहीं दी गई है जिन्हें नकली सामान या नकली सेवाओं की आपूर्ति की गई हो। धारा 14(क) को तदनुसार संशोधित किया जा सकता है जिससे उन व्यक्तियों को राहत प्रदान की जा सके जिन्हें नकली सामान या नकली सेवाओं के कारण क्षति पहुंची हो।

उच्चतर न्यायालय के समक्ष अपील दायर करने के लिए कुछ धनराशि जमा करने हेतु अपीलकर्ता पर दबाव डालने के लिए धारा 15, 19 और 23 में संशोधन किया गया है। अधिकांश अपीलों के मामले में स्थगन आदेश नहीं दिया जाता। स्थगन आदेश न दिए जाने पर, निचली अदालतें निष्पादन कार्यवाही और दंड कार्यवाही को आगे बढ़ाती रहती हैं तथा डिक्री धारक को यह अनुमति दे देती हैं कि वह अपील दायर करने के लिए दूसरे पक्ष द्वारा भुगतान की गई जमा राशि को निकाल ले। यदि निचली अदालत का आदेश खारिज कर दिया जाता है तो अपीलकर्ता को अपनी जमा राशि वसूल करने की प्रक्रिया कठिन हो जाती है।

इस बात को ध्यान में रखते हुए, अपील के संबंध में जमा की जाने वाली धनराशि, अपीलीय न्यायालय में जमा की जानी चाहिए ताकि जमा राशि को रिलीज करना निचली अदालत की पहुंच से बाहर हो। विकल्प के तौर पर निचले फोरम पर यह पाबंदी लगाई जानी चाहिए कि वह अपीलीय आयोग द्वारा कोई विशिष्ट आदेश दिए जाने तक जमा राशि रिलीज न करे। ऐसी अपील की सुनवाई हर हालत में यथाशीघ्र की जाएगी और यह प्रयास किया जाएगा कि अपील स्वीकार कर लिए जाने की तारीख से 90 दिन की अवधि के भीतर अपील का निपटान अंतिम रूप से कर दिया जाए। इस प्रकार, अपील खारिज कर दिए जाने की स्थिति में, डिक्री धारक को यह धनराशि सौंपने में संभवतः अनुचित विलम्ब न हो।

धारा 16 में उप–धारा (1 ख) जोड़ दिए जाने से राज्य आयोग के एक या एक से अधिक सदस्यों वाली एक पीठ गठित करने का उपबंध सृजित हो गया है। इसी प्रकार का उपबंध राष्ट्रीय आयोग के लिए भी धारा 20 की उप–धारा (1क) के अंतर्गत किया गया है। शिकायत निवारण एजेंसियों के गठन पर कानून के निर्माताओं की मंशा स्पष्ट है। मंशा यह है कि विवादों के निपटान के लिए तीन सदस्यों की एक पीठ बनाई जाए। हाल ही में किए गए संशोधनों के अनुसार अतिरिक्त पीठों का गठन भी किया जा सकता है, चाहे वे एक सदस्य वाली पीठ ही हों जो कानून की भावना के खिलाफ है। इसलिए, कम से कम दो सदस्यों वाली, बेहतर हो तीन सदस्यों वाली पीठों का गठन करने

के लिए आवश्यक संशोधन किए जा सकते हैं। ऐसी स्थिति में, अतिरिक्त पीठ गठित करने के लिए सदस्यों की संख्या में उपुयक्त वृद्धि करने हेतु धारा 16(ख) और धारा 20(ख) में भी संशोधन किए जाने की आवश्यकता है। यह पीठ, वरीयतः सर्किट पीठ होनी चाहिए ताकि उनकी बैठकें विभिन्न स्थानों पर की जा सकें और ताकि न्याय प्रदायगी प्रणाली को उपभोक्ताओं के दरवाजे पर लाया जा सके।

सिविल प्रक्रिया संहिता के नियम 41 न तो धारा 17 में और न ही धारा 19 में कोई ऐसा उपबंध है जिससे निचली अदालतों द्वारा दिए गए निर्णय या पारित की गई डिक्री पर कोई स्थगन आदेश दिया जा सके। ऐसा कोई उपबंध जोड़ने के लिए अधिनियम में संशोधन किया जा सकता है।

धारा 22(2) के अंतर्गत, रिकार्ड में किसी स्पष्ट गलती पर राष्ट्रीय आयोग को अपने द्वारा दिए गए आदेश पर पुनर्विचार करने की शक्ति होगी। इसी प्रकार की शक्ति, राज्य आयोग और जिला फोरम को भी दी जा सकती है।

इसी प्रकार, एकपक्षीय आदेश को रद्द करने की शक्ति जिला फोरम और राज्य आयोग को भी दी जानी चाहिए, क्योंकि राष्ट्रीय आयोग को यह शक्ति प्राप्त है कि वह धारा 22 क के अंतर्गत किसी एकपक्षीय आदेश को रद्द कर सके।

नए रूप में बनाई गई धारा 25 जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग को अंतरिम आदेश को प्रभावी और त्वरित ढंग

से कार्यान्वित करने के लिए अधिक शक्ति प्रदान करती है। इन शक्तियों का विस्तार अंतिम आदेश के कार्यान्वयन के लिए किया जा सकता है। धारा 25(3) के अनुसार, अंतिम आदेश का कार्यान्वयन, जिले के कलैक्टर को उक्त धनराशि का प्रमाणपत्र जारी करके किया जा सकता है जो उस धनराशि की वसूली उसी तरीके से करेगा जैसे वह भू–राजस्व की बकाया राशि की वसूली करता है। चूंकि आदेशों के कार्यान्वयन में विलम्ब हो रहा है, इसलिए संसद ने अपने विवेक से इस धारा में संशोधन कर दिया ताकि कार्यान्वयन को तेज किया जा सके। परन्तु इस प्रक्रिया में भी काफी समय लग जाता है और अपेक्षित परिणाम देने में विफल हो सकती है। इसलिए, धारा 25 को बदलने के बजाए इसे ज्यों का त्यों रखा जाए और अंतरिम आदेश का अनुपालन न करने के लिए तीसरे संशोधनों में जो नए उपबंध सृजित किए गए हैं, उन्हें ही एक उप–धारा या अलग धारा द्वारा जोड़ा जा सकता है।

अंतिम आदेश के कार्यान्वयन के लिए और अन्य कानूनी समस्याओं से बचने के लिए धारा 5 में भी उचित संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

इसके अलावा, अपील की धार्यता के संबंध में इस धारा में कोई जिक्र नहीं है। राष्ट्रीय आयोग ने यह व्यवस्था[16] दी कि कार्यान्वयन के आदेश के खिलाफ कोई अपील धार्य नहीं है। एक अन्य मामले में यह व्यवस्था दी गई कि धारा 25 और 27 के

[16] I (1995) सी.पी.जे. 58 (एन.सी.)

अंतर्गत दिए गए आदेशों के खिलाफ कोई अपील नहीं की जा सकती। इस आदेश के बाद, अधिनियम में संशोधन करके, धारा 27–क जोड़ी गई, जिसके द्वारा धारा 27 के अंतर्गत दिए गए आदेश के खिलाफ अपील करने का उपबंध किया गया। परन्तु ऐसा संशोधन धारा 25 में नहीं किया गया। यदि विधायिका की मंशा, धारा 25 के अंतर्गत दिए गए आदेश के खिलाफ किसी अपील की व्यवस्था करने की नहीं है तो उसे जोड़ा जा सकता है ताकि संदेह को दूर किया जा सके।

तीव्र न्याय सुनिश्चित करने और पार्टियों को नोटिस तामील करने तथा पार्टियों द्वारा हस्ताक्षर की गई अभिस्वीकृतियां या प्राप्तियां प्राप्त करने में होने वाले विलम्ब को कम करने के लिए, 2002 के संशोधनों ने धारा 28–क जोड़कर स्थिति में मूलभूत परिवर्तन कर दिए। नोटिस तामील करने के नए तरीकों का प्रस्ताव दिया गया। ई–मेल के जरिए नोटिस तामील करने को भी शामिल किया जा सकता है। निस्सन्देह, इससे तीव्रता से नोटिस तामील करने की सुविधा मिलती है। परन्तु डाकखाने के कर्मचारी के इस पृष्ठांकन को स्वीकार कर लेना आगे कार्रवाई करने के लिए उतना सुरक्षित नहीं है कि प्रेषिती या उसके एजेंट ने नोटिस की सुपुर्दगी लेने से इंकार कर दिया है। पृष्ठांकन में चालबाजी करना कोई इतनी मुश्किल बात नहीं है। डाकखाने के किसी कर्मचारी द्वारा की गई शरारत के लिए पार्टियां शिकार बन सकती हैं। जब तक पार्टियों को ऐसी धोखाधड़ी को स्पष्ट करने का

अवसर न मिले, तब तक पार्टी को बिना सुने ही दोषी नहीं माना जाएगा। इसलिए, इस धारा में उचित संशेधन किया जा सकता है।

इस अधिनियम के उपबंधों को लागू करने के उद्देश्य के लिए राष्ट्रीय आयोग को विनियम बनाने की शक्ति प्रदान करने हेतु एक संशोधन द्वारा धारा 30–क जोड़ी गई है। यह वांछनीय है कि यदि एक उचित अवधि के अंदर ऐसे विनियमों का अनुमोदन सरकार द्वारा सम्प्रेषित किए जाने के लिए समय–सीमा दे दी जाए। विधायिका की यह मंशा है कि अधिनियम के अंतर्गत तीन महीने के अंदर मामले का निपटान कर दिया जाए। इसी भावना को इस अनुभाग के उपबंधों के लिए भी विस्तारित किया जा सकता है और केन्द्रीय सरकार 90 दिन के अंदर प्रस्तावित विनियमों का अनुमोदन करेगी ताकि राष्ट्रीय आयोग, अधिनियम के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक उपबंध बनाने में सक्षम हो सके जिससे तीव्र न्याय सुनिश्चित होता है।

जब कभी केन्द्रीय अधिनियम में संशोधन किए जाते हैं तो इन संशोधनों को लागू करने के लिए राज्य सरकार के नियमों में उचित संशोधन करने या नियमों का नया सैट लाने की जरूरत पड़ सकती है। उदाहरण के लिए जिला फोरम, राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग द्वारा पारित किए गए आदेश को जिले के कलैक्टर द्वारा कार्यान्वित करने के लिए धारा 25 में संशोधन किया गया। जिला कलैक्टर धनराशि वसूल करने के लिए उसी तरीके से

कार्यवाही करेगा जिस तरीके से भू–राजस्व की बकाया राशि को वसूल करने के लिए करता है। इस उपबंध को लागू करने के लिए राज्य सरकार को हर हालत में राज्य के नियमों में तदनुरूपी उपबंध जोड़ना चाहिए। उस समय तक इन उपबंधों को लागू करना मुश्किल हो सकता है। इस कठिनाई पर काबू पाने के लिए धारा 31(2) में संशोधन किया जा सकता है जिससे, राज्य सरकार के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाए कि वह राज्य विधानसभा के अगले सत्र से पहले, इन संशोधनों को तुरन्त लागू करने के लिए उपयुक्त नियम बनाए। तात्कालिकता की स्थिति में नए नियमों को एक अध्यादेश द्वारा लागू किया जा सकता है और बाद में विधानसभा के एक अधिनियम द्वारा उसे प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

उपभोक्ता संरक्षण केन्द्रीय नियमावली, 1987 में संशोधन करने के लिए कुछ सुझाव

1. अधिनियम की धारा 25 के अंतर्गत यथा उल्लिखित धारा 2 के अंतर्गत 'प्रमाणपत्र' शब्द की परिभाषा दी जा सकती है।

2. नियम 3 के अंतर्गत केन्द्रीय समिति के सदस्यों की अधिकतम संख्या बढ़ाकर 200 की जा सकती है ताकि उपभोक्ता संगठनों या उपभोक्ताओं के और अधिक प्रतिनिधियों को स्थान दिया जा सके। प्रत्येक राज्य से उपभोक्ता संगठनों के कम से कम एक प्रतिनिधि को और यदि किसी राज्य विशेष में अधिक संख्या में संगठन काम कर रहे हैं तो संगठनों के एक प्रतिशत को उस राज्य का प्रतिनिधित्व करने की इजाजत दी जा सकती है। इसी प्रकार, महिला प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाई जा सकती है।

3. एक नया नियम जोड़ा जा सकता है जिससे केन्द्रीय सरकार को तीन साल की अवधि के लिए, हर साल केन्द्रीय परिषद् में सदस्यों को नामज़द करने की शक्ति प्राप्त हो ताकि हर साल 1/3 सदस्य सेवानिवृत्त हो

सकें। बारी–बारी से होने वाली इस सेवानिवृत्ति से परिषद् के बिना निष्क्रिय हुए वह लगातार काम करती रहेगी। इस प्रकार केन्द्रीय परिषद्, उपभोक्ताओं के हितों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए एक स्थायी निकाय बन जाती है।

4. हर 6 महीने बाद की जाने वाली अगली बैठक में एक कृत कार्रवाई रिपोर्ट मंगवा कर अपनी सिफारिशों के कार्यान्वयन के अनुसार काम करने और अधिक कारोबार करने के लिए हर साल केन्द्रीय परिषद् की कम से कम दो अनिवार्य बैठकें करने की आवश्यकता है। यदि इसकी सिफारिशों में से कोई सिफारिश सरकार द्वारा लागू नहीं की जाती है तो या तो उन सिफारिशों को वापस लेने के लिए या सरकार में उनका प्रतिनिधित्व करने के लिए अगली बैठक में उन सिफारिशों की समीक्षा की जा सकती है।

5. केन्द्रीय सरकार, परिषद् के सदस्यों में से, अत्यधिक महत्त्व के मुद्दों पर विभिन्न कार्य समितियां गठित की जा सकती हैं। ये समितियां गहनता से उन मुद्दों पर चर्चा करेंगी और एक संकल्प पारित करने के लिए केन्द्रीय परिषद् को अपने निष्कर्ष प्रस्तुत करेंगी। इस उद्देश्य के लिए ये समितियां, किसी तर्कसंगत निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अपनी बैठकों में विशेषज्ञों को आमंत्रित कर सकती हैं।

6. नियम 4 के उप–नियम 6 के अंतर्गत केन्द्रीय परिषद् के सदस्यों को मुफ्त आवास उपलब्ध कराने या मुफ्त आवास के बदले वास्तविक राशि का भुगतान करने के लिए एक उपबंध सृजित किया जा सकता है।

7. केन्द्रीय परिषद् की सिफारिशों को शक्ति प्रदान करने के लिए नियम 4 के उप–नियम 7 को निम्नलिखित रूप में प्रतिस्थापित किया जा सकता हैः

"जहां तक संभव हो, केन्द्रीय सरकार एक उचित अवधि के अंदर केन्द्रीय परिषद् की सिफारिशें लागू करने का प्रयास करेगी, हालांकि केन्द्रीय परिषद् द्वारा पारित किए गए संकल्पों का स्वरूप अनुशंसात्मक होगा।"

8. राष्ट्रीय आयोग के सदस्य बीस हजार रुपए प्रति मास का समेकित मानदेय या यदि बैठक अंशकालिक आधार पर है तो 1000 रुपए प्रति बैठक प्रतिदिन का समेकित मानदेय प्राप्त कर सकते हैं।

9. यदि न्यायिक पृष्ठभूमि वाला सदस्य उपलब्ध नहीं है तो नियम 12 के उप–नियम 6 में उचित संशोधन किया जा सकता है जिससे बिना न्यायिक पृष्ठभूमि वाले वरिष्ठतम सदस्य को अध्यक्ष के कार्य करने की शक्ति प्राप्त हो।

10. नियम 12 के उप–नियम (7) का विलोपन किया जा सकता है क्योंकि इससे कोई उद्देश्य पूरा नहीं होता। इस

उप–नियम के उल्लंघन की स्थिति कीं, की जाने वाली कोई कार्रवाई निर्धारित नहीं की गई है। इस उप–नियम का उल्लंघन साबित करना भी बहुत मुश्किल है।

11. लगातार तीन बैठकों से गैर–हाजिर रहना कोई गंभीर अपराध नहीं है जिसकी तुलना नियम 13 के उप–नियम के खंड (क़ से (ड.) तक में उल्लिखित किसी अन्य अयोग्यता के साथ की जा सके। इसलिए, खंड (च) का विलोपन किया जा सकता है।

12. चार महीने के अंदर शिकायत पर निर्णय देने के लिए नियम 14, उप–नियम (4) में (अधिनियम में विधिवत् संशोधन करके) संशोधन किया जा सकता है क्योंकि मौजूदा परिस्थितियों में तीन महीने का समय पर्याप्त नहीं है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम को प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए, देश में उपभोक्ता न्याय प्रशासन के हित में उपरोक्त सुझावों को गंभीरता से लिए जाने की आवश्यकता है। यह वास्तविकता कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में आगे संशोधन करने के लिए सुझाव आमंत्रित करने के लिए उपभोक्ता मामले विभाग काम कर रहा है, इस संबंध में केन्द्रीय सरकार के सकारात्मक और सृजनात्मक दृष्टिकोण का एक साक्ष्य है।

अनुबंध

नोटिस, शिकायत, शपथपत्र और उत्तर का मॉडल फार्म

मॉडल फार्म 1–शिकायत दर्ज करने से पहले नोटिस

नाम और पता

.....

(ट्रेडर, डीलर, फर्म कम्पनी आदि का)

(पूरा पता)

के विषय में (विवरण देते हुए शिकायत वाले सामान/सेवाओं का उल्लेख करें)

महोदय,

आपको सूचित किया जाता है कि मैंने ..... रुपये के, ... बैंक में आहरित दिनांक ..... के चैक संख्या ..... के जरिए या आपके कैश मीमों/रसीद/इनवायस संख्या ..... के प्रति नकद भुगतान किए गए ..... रुपये के प्रतिफल में आप के .... से ..... खरीदा था।

उक्त में निम्नलिखित खराबियां हैं :

(1) .....
.....

(2) .....
.....

मैंने कई बार आपको मामले की सूचना दी (पिछले पत्र, यदि कोई हो, का हवाला दें) परंतु मेरे सभी निवेदनों के बावजूद अपने सामान की खराबी या सेवा में होने वाली कमी की भरपाई नहीं की जो वास्तव में खेदजनक है और व्यवसाय संबंधी व्यवहार के विरूद्ध है। आपके द्वारा की गई कर्त्तव्य की अवहेलना और सामान को ठीक करने में विफल रहने तथा लापरवाही करने के कारण मुझे निम्नलिखित क्षति हुई है/राशि खर्च करनी पड़ी है :

.....
.....

.....

.....

.....

.....

(विवरण दें)

जिसकी भरपाई करने की जिम्मेदारी आपकी है। आपसे अंततः एतद् द्वारा अनुरोध है कि :

(1) सामान में आई उक्त खराबी को ठीक करें और / या

(2) उसके बदले नया सामान दें और या

(3) कीमत/भुगतान किए गए प्रभार लौटाएं

(4) आपकी लापरवाही के कारण हुई वित्तीय हानि/क्षति ब्याज की हानि के मुआवजे का भुगतान करें। ..... (विवरण दें)।

इस संबध में ..... प्रतिशत की दर से ..... रुपये की राशि का भुगतान इस नोटिस की प्राप्ति के ..... दिन के अंदर कर दें अन्यथा मैं अपनी उपरोक्त शिकायत के निवारण के लिए और उपरोक्त धनराशि की वसूली के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के कानूनी उपबंधों के अंतर्गत शिकायत दायर करने के अलावा सिविल और फौजदारी दोनों अदालतों में, पूर्णतः आपके हर्जे, खर्चे और जिम्मेदारी पर मुकदमा दायर करने के लिए बाध्य हूंगा। इसे कृपया नोट कर लिया जाए।

स्थान : .....

तारीखः .....

हस्ताक्षर.....

मॉडल फार्म 2–शिकायत

माननीय जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम ..... के समक्ष

या

माननीय राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण कमीशन .....के समक्ष

या

माननीय राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण कमीशन, नई दिल्ली के समक्ष

..... (पूरा नाम) (विवरण) (पूरा पता) के मामले में 200.. की शिकायत संख्या ..... के विषय में

..... शिकायतकर्ता

बनाम

(पूरा नाम) (विवरण) (पूरा पता)

..... विपक्षी पार्टी /पार्टियां

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 12/धारा 17/धारा 21 के अंतर्गत शिकायत

सविनय निवेदन इस प्रकार है :'

भूमिका

(इस प्रारंभिक पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को अपना परिचय और विपक्षी पार्टी/पार्टियों का परिचय देना चाहिए।)

लेनदेन

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को शिकायत वाले लेनदेन अर्थात ली गई सेवाओं के विवरण, सामान की मदों/सेवा के स्वरूप और किस्म, खरीदे गए सामान/ली गई सेवाओं की तारीख, सामान/सेवा के प्रति पूर्णतः या अंशतः कीमत/प्रतिफल के रूप में भुगतान की गई धनराशि, का विवरण देना चाहिए। बिल/कैश मीमो/वाउचर या रसीद की फोटोकॉपी संलग्न की

जानी चाहिए और उन पर अनुलग्नक क, ख, ग आदि या 1, 2, 3 आदि के रूप में उचित ढ़ंग से अंकित किया जाना चाहिए।)

खराबी/कमी

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को शिकायत स्पष्ट करनी चाहिए अर्थात क्या हानि या क्षति किसी ट्रेडर द्वारा अपनाए गए अनुचित व्यापार व्यवहार या प्रतिबंधित व्यापार व्यवहार द्वारा हुई है या क्या सामान में कोई खराबी है या क्या सेवा में कोई कमी रही है या क्या ट्रेडर ने सामान की अधिक कीमत ली है। व्यक्ति को ट्रेडर द्वारा अपनाए गए अनुचित व्यापार व्यवहार का स्परूप स्पष्ट करना चाहिए जैसे सामान/सेवा की गुणवत्ता से संबंधित, प्रयोजनता, वायदा की गई अवधि के लिए वारंटी या गारंटी। सामान में होने वाली खराबी की सीमा और स्वरूप को स्पष्ट किया जाना चाहिए और इसी प्रकार सेवा में होने वाली कमी की सीमा और स्वरूप को भी स्पष्ट किया जाना चाहिए। अधिक कीमत लिये जाने के मामले में, व्यक्ति को चाहिए कि वह ट्रेडर द्वारा वसूल की गई कीमत के मुकाबले समय–समय पर प्रवृत्त किसी कानून के अंतर्गत या उसके द्वारा निश्चित की गई वास्तविक कीमत या सामान पर और उसके पैकिंग पर लिखी गई कीमत के विवरण का उल्लेख करे। जीवन और सुरक्षा के लिए खतरे वाले सामान की बिक्री के प्रस्ताव के खिलाफ भी शिकायत दायर की जा सकती है, जब सामान का इस्तेमाल कर लिया जाए। आपको अपनी शिकायत का वर्णन करना चाहिए। इस बात से आश्वस्त हो जाना चाहिए कि इसे संवेदनशील और व्यावहारिक न्यायधीशों द्वारा पढ़ा जा रहा है। इस पर सुनवाई की जा रही है। संबंधित दस्तावेजों की फोटोप्रतियां संलग्न की जानी चाहिए।)

संशोधन

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को विशेष रूप से दर्शाना चाहिए कि मामले को सुलझाने के लिए उसने क्या प्रयास किए अर्थात व्यक्तिगत दौरे या समझौता वार्ता, लिखित में पत्र व्यवहार, यदि कोई हो, क्या कोई कानूनी नोटिस दिया गया और/या वह शिकायत के निवारण के लिए किसी अन्य एजेंसी जैसे सक्षम

क्षेत्राधिकार वाले सिविल या फौजदारी अदालत के पास गया, उसकी कार्यवाही का चरण, उसका परिणाम, यदि कोई निकला, ऐसी कार्यवाहियों की प्रतियों सहित (बेहतर हो यदि प्रमाणित हों)। ट्रेडर से प्राप्त हुए प्रत्युत्तर के स्परूप, जब अनियमितताएं उसकी जानकारी में लाई जाएं, का जिक्र भी यहां किया जाना चाहिए।)

अन्य उपबंध

(इस पैराग्राफ में किसी अन्य कानून या नियम या प्रक्रिया विशेष के विनियम का हवाला दिया जाए जो इस मामले पर लागू हो और/या जिसका ट्रेडर द्वारा और कानून के अंतर्गत उपभोक्ता के अधिकार का उल्लंघन किया गया हो। ऐसे प्रासंगिक कानूनी दायित्व भी होते हैं जो ट्रेडर को पूरे करने चाहिए और ऐसा न करने पर प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है तथा फोरम इसका संज्ञान लेगा।)

साक्ष्य

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को उन दस्तावेजों और/या गवाहों का विवरण देना चाहिए जिन्हें वह अपने मामले को साबित करने के लिए आधार बनाएगा। ऊपर किए गए उल्लेख के अनुसार अनुबंधों के रूप में संलग्न किए गए दस्तावेजों को उचित सूची में शामिल किया जाए और गवाहों की सूची, यदि कोई हो, भी इसी प्रकार दाखिल की जाए। अनुबंधों को 'सत्य प्रतिलिपि' के रूप में अनुप्रमाणित किया जाना चाहिए।)

क्षेत्राधिकार

(इस पैराग्राफ में, शिकायतकर्ता को शिकायत में दावा निर्धारित करना चाहिए अर्थात 20 लाख रुपये तक, बीस लाख रुपये से एक करोड़ रुपये तक या उससे अधिक और फोरम/राज्य स्तरीय कमीशन/राष्ट्रीय कमीशन, जैसा भी मामला हो, का आर्थिक क्षेत्राधिकार दिया जाना चाहिए। किसी औपचारिक

आपत्ति को दूर करने के लिए क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार को प्रमुखता से दिखाया जाना चाहिए।)

परिसीमन

(इस पैराग्राफ में यह दिया जाना चाहिए कि मौजूदा शिकायत, अधिनियम की धारा 24 क के अंतर्गत निर्धारित अवधि के अंदर दायर की गई है।

दावा की गई राहत

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को उसके द्वारा दावा की गई राहत के स्वरूप का वर्णन करना चाहिए अर्थात सामान में होने वाली खराबी या सेवाओं में होने वाली कमी को दूर करने के लिए सामान के बदले नया सामान बदलना, भुगतान की गई कीमत या प्रभार लौटाना आदि और/या विपक्षी पार्टी की लापरवाही से हुई वित्तीय हानि या क्षति के कारण उसके हित के विपरीत मुआवजा। यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिए कि आपने दावा किए गए मुआवजे की धनराशि का हिसाब कैसे लगाया है।)

प्रार्थना वाला खंड

अतः सविनय निवेदन है कि माननीय फोरम/कमीशन कृपया .....(उस राहत का विवरण जो शिकायतकर्ता चाहता है कि न्यायालय उसे प्रदान करे।)

स्थान : .....
दिनांक : .....

शिकायतकर्ता.....
के जरिये

(वकील या उपभोक्ता
एसोसिएशन आदि)

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त शिकायतकर्ता एतद्द्वारा सत्यनिष्ठा से सत्यापित करता हूँ कि मेरी उपरोक्त शिकायत की विषय–वस्तु, मेरी जानकारी के अनुसार सही और सत्य है और इसका कोई भाग मिथ्या नहीं है तथा इसमें किसी सारवान तथ्य को छिपाया नहीं गया है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) में सत्यापित।

(शिकायतकर्ता)

टिप्पणी : हालांकि यह अनिवार्य नहीं है कि शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के समथन में कोई ऐसा हलफ़नामा दाखिल करे जो आरोपों की सच्चाई और सत्यनिष्ठा की पुष्टि करता हो और मामले को विश्वसनीयता प्रदान करता हो। इसका स्टाम्प पेपर पर होना भी आवश्यक नहीं है। परंतु इसे, उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त किए गए किसी 'ओथ कमीशनर' से अनुप्रमाणित कराया जाना चाहिए। इसका फोरमेट बिल्कुल सरल ळें

मॉडल फार्म 3 – शिकायत के समर्थन में हलफ़नामा

माननीय ..... के समक्ष

दिनांक ..... की शिकायत संख्या ..... के विषय में।

..... शिकायतकर्ता

बनाम

..... विपक्षी पार्टी

के मामले में

हलफ़नामा

श्री ..... सुपुत्र ..... आयु.....
निवासी ..... का हलफ़नामा

1. कि मैं उपरोक्त मामले में शिकायतकर्ता हूँ, मौजूदा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से पूरी तरह परिचित हूँ और इस हलफ़नामें में शपथ लेने के लिए सक्षम हूँ।

2. कि मेरी संलग्न शिकायत में दिए गए तथ्यों, जिनकी विषय–वस्तु संक्षिप्तता के कारण इसमें दोहराई नहीं गई है, को इस हलफ़नामें के एक अभिन्न भाग के रूप में पढ़ा जाए और यह तथ्य मेरी जानकारी के अनुसार सत्य और सही हैं।

शपथकर्ता

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त शिकायतकर्ता एतद्द्वारा सत्यनिष्ठा से सत्यापित करता हूँ कि मेरी उपरोक्त शिकायत की विषय–वस्तु, मेरी जानकारी के अनुसार सही और सत्य है और इसका कोई

भाग मिथ्या नहीं है तथा इसमें किसी सारवान तथ्य को छिपाया नहीं गया है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) में सत्यापित।

शपथकर्ता

मॉडल फार्म 4–ट्रेडर द्वारा शिकायत का उत्तर

माननीय उपभोक्ता निवारण फोरम/कमीशनर ..... के समक्ष

दिनांक ..... की शिकायत संख्या ..... के विषय में

..... शिकायतकर्ता

बनाम

..... विपक्षी पार्टी

के मामले में

सुनवाई की तारीख .....

शिकायतकर्ता की शिकायत के उत्तर में प्रतिवादी की ओर से लिखित बयान

सविनय निवेदन इस प्रकार है :–

प्रारंभिक आपत्तियां

1. कि मौजूदा शिकायत पूरी तरह गलत, निराधार और कानूनी दृष्टि से अमान्य है और इसलिए खारिज किए जाने योग्य है। प्रश्नाधीन लेनदेन किसी प्रतिफल के बिना और प्रभार मुक्त था।

2. कि इस माननीय फोरम/कमीशन को शिकायत से संबंधित विवाद पर विचार करने और न्यायनिर्णयन करने का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि यह कोई उपभोक्ता विवाद नहीं है और उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986, जिसे आगे इसमें उक्त अधिनियम कहा गया है, के उपबंधों के दायरे में नहीं आता और इस मामले की सुनवाई केवल सिविल न्यायालय द्वारा की जा सकती है और इसलिए यह शिकायत केवल इसी कारण से खारिज किए जाने योग्य है।

3. कि मौजूदा शिकायत में शिकायतकर्ता द्वारा उठाया गया विवाद स्पष्ट रूप से उक्त अधिनियम के दायरे से बाहर है और किसी भी स्थिति में यह अधिनियम ..... अधिनियम के उपबंधों के अतिरिक्त है न कि उसके विपरीत। इस अधिनियम के अंतर्गत शिकायतकर्ता द्वारा दायर की गई कार्यवाही पूरी तरह अमान्य और बिना क्षेत्राधिकार के है।

4. कि उक्त अधिनियम की धारा 2(1) में दी गई 'शिकायतकर्ता' 'शिकायत' 'उपभोक्ता विवाद' और 'सेवा की' परिभाषाएं मौजूदा विवाद के दावों को कवर नहीं करती और कि उपरोक्त परिभाषाओं के अनुसार

शिकायतकर्ता उपभोक्ता नहीं है तथा शिकायत से संबंधित विवाद कोई 'उपभोक्ता विवाद' नहीं है।

5. कि मौजूदा शिकायत निराधार है और प्रतिवादी को परेशान करने तथा ब्लैकमेल करने के लिए कानून की प्रक्रिया का घोर दुरूपयोग है।

6. कि शिकायतकर्ता को मौजूदा कार्यवाही दायर करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं है।

7. कि यह शिकायत, आवश्यक और उचित पार्टी के 'नान–ज्वाइंडर' के कारण अनुपयुक्त है और केवल इसी कारण खारिज किए जाने योग्य है।

8. कि शिकायतकर्ता ने, सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय में .... के लिए एक सिविल मुकदमा पहले ही दायर कर दिया है जो ..... के न्यायालय में निपटान के लिए लंबित है और मौजूदा शिकायत निष्फल हो गई है।

9. कि मौजूदा शिकायत, परिसीमन द्वारा बाधित है।

10. कि इस माननीय फोरम/कमीशन को कोई क्षेत्रीय या आर्थिक क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि इस माामले से संबंधित धनराशि, उक्त अधिनियम की धारा 11(प), धारा 17 (क) (प) और धारा 21 (क)(ए) में विनिर्धारित सीमा से अधिक/कम है।

11. कि मौजूदा शिकायत, सारहीन और चिढ़ाने वाली है और अधिनियम की धारा 26 के अंतर्गत खारिज किए जाने योग्य है।

12. कि मौजूदा शिकायत, कानून के अनुसार सत्यापित नहीं की गई है।

गुण–दोष के आधार पर

इन पैराग्राफों में प्रतिवादी को, लगाए गए प्रत्येक आरोप और शिकायतकर्ता द्वारा दी गई वास्तविक तथा कानूनी दलीलों का उत्तर देना चाहिए। यदि उसने खराबी या कमी को ठीक कर

दिया है तो इस संबंध में उठाए गए कदमों का विवरण दें। अन्य बातों के साथ–साथ वह अपने निम्नलिखित बचाव भी कर सकता है :

1. कि उपरोक्त विवाद के पक्षों के बीच किया गया लेनदेन वाणिज्यिक है और शिकायतकर्ता इस प्राधिकारी से किसी राहत का दावा नहीं कर सकता क्योंकि .....

2. कि शिकायतकर्ता ने एक विक्रेता/रिटेलर/वितरक आदि के रूप में पुनर्बिक्री के लिए सामान खरीदा था और इसलिए आरोपित खराबी/कमी के लिए इस माननीय फोरम/कमीशन के पास आने से बाधित है क्योंकि ..... (विवरण दें)

3. कि शिकायतकर्ता ने पहले ही वारंटी की अवधि का लाभ उठा लिया है जिसके दौरान उत्तर देने वाले प्रतिवादी ने प्रश्नाधीन सामान की मरम्मत कर दी है/को बदल दिया है। इस प्रकार, शिकायतकर्ता पर यह शिकायत करने पर या अपनी गलती के कारण लाभ लेने पर कानूनी रूप से रोक है।

4. कि मौजूदा शिकायत इस तथ्य के बावजूद अत्याधिक अतिश्योक्तिपूर्ण है कि शिकायतकर्ता विलंब और गफ़लत के लिए स्वयं जिम्मेदार है क्योंकि उसने सामान की श्रेणी/फ्लैट की आबंटन योजना के प्रकार/वाहन के मॉडल आदि ..... के बारे में कई बार अपना विकल्प बदला है। (विवरण दें)

5. कि उत्तर देने वाले प्रतिवादी को उपरोक्त विवाद की विषय–वस्तु के लिए अतिरिक्त कीमत वसूल करने का पूरी तरह अधिकार है क्योंकि समय उसकी सुपुर्दगी के जिए महत्वपूर्ण नहीं था। शिकायतकर्ता, उत्पाद शुल्क/बजटीय प्रावधानों आदि में बढ़ोतरी हो जाने के

कारण दिनांक ..... से बढ़ी हुई कीमत का भुगतान करने के लिए जिम्मेदार है क्योंकि ..... (विवरण में)

6. कि शिकायतकर्ता ने बिना कोई विरोध प्रकट किए मरम्मत/बदलने आदि के प्रति सामान/सेवा को स्वीकार कर लिया है और मौजूदा शिकायत केवल बाद में सोची गई बात है।

7. कि किसी बात पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उत्तर देने वाले प्रतिवादी, सद्भावना प्रदर्शन के रूप में ..... करने के लिए तैयार है। (किसी ऐसे संशोधन, यदि कोई हो, का विवरण दें जो अवयस्क या उपभोक्ता को होने वाली बर्दाश्त करने योग्य समस्या और मुकदमें बाजी की समस्या के मामले में किया जा सकता हो।)

इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, सेवा में होने वाले दोष/खराबी/लापरवाही और/या कमी के आरोप, असंगत और काल्पनिक होने के साथ–साथ पूरी तरह गलत, निराधार, मिथ्या और कानूनी दृष्टि से अमान्य हैं।

अनुरोध खंड और उसमें किए गए सभी अनुरोध पूरी तरह गलत हैं और जोर देकर उनसे इंकार किया जाता है। शिकायतकर्ता किसी भी प्रकार की राहत का हकदार नहीं है। और मॉडल फार्म लागत का हकदार नहीं है।

स्थान .....
दिनांक .....

ह.....
(विपक्षी पार्टी)
वकील के जरिए

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त नाम वाला प्रतिवादी एतद् द्वारा सत्यापन करता हूँ कि गुणावगुण के आधार पर लिखित बयान के पैरा .... से ..... तक की विषय–वस्तु मेरी जानकारी के अनुसार सत्य और सही है। जबकि गुणावगुणों के आधार पर प्रारंभिक आपत्तियों के पैरा ..... से ..... तक और उत्तर के पैरा ..... से ..... तक मेरी सूचना, विश्वास और मेरे द्वारा प्राप्त कानूनी राय के अनुसार सही है और मेरा विश्वास है कि वे सही हैं और अंतिम पैरा माननीय न्यायालय से किया गया अनुरोध है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) पर सत्यापित।

ह.

(विपक्षी पार्टी)